# अल-तरीक़त

# THE INWARD WAY

## AL-TARIQAT

Allama J.Takle

अल्लामा जे. टैकल साहब

1924

# The Inward Way

Rev J.Takle

Aim at leading the Muslim through the truth and error of Sufi doctrine to consider Jesus, the Way, the Truth and The Life.

---

Written in a style and spirit calculated to remove Prejudice and disarm critism.

# अल-तरीक़त

**अल्लामा जे॰ टैकल साहब**

# الطریقت

By kind permission of the C.L.S.
Approved by the C.L.M.C.

क्रिस्चियन लिटरेचर सोसाइटी की इजाज़त से
**पंजाब रिलीजियस बिक सोसाइटी, अनार कली, लाहौर ने शायाअ की**
**1924 ई॰**

## फेहरिस्त मज़ामीन - अल-तरीक़त

पहला
बाब.....
.....5

ख़ुदा जो हमारा वतन है .....5

दूसरा बाब.....12

तसव्वुफ़.....12

इस का आग़ाज़.....12

दीगर तासीरात.....13

तारीफ़.....14

तसव्वुफ़ का तरीक़ा.....16

तीसरा बाब.....18

बातिनी तरीक़े की मंज़िलें.....18

नज़रिये की तब्दीली.....19

तौबा.....20

तौबा क्या है?.....20

नफ़्सकुशी.....23

दिल के ग़रीब.....24

ख़ुद इंकारी.....25

दिल की पाकीज़गी.....25

मुनक़सिम इरादा.....26

नफ़्स ग़ुलाम बनाने वाला.....28

चौथा बाब.....31

कमाल की तरफ़ तरक़्क़ी .....31
अल्लाह का नाम .....33
हालत वज्द .....34
जज़्बाती तसव्वुर .....36
रूहानी ख़ुदकुशी .....37
पांचवां
बाब.....
.....40
कामिल रुहानी रहनुमा .....40
पीर की तासीर.....41
दरमयानी की ज़रूरत .....42
कामिल मुर्शिद .....43
दुआ के मअनी .....45
ख़ैरात .....46
रूह-उल-क़ुद्दुस का अंदर बसना .....47
छटा
बाब.....
.....50
मसीह और रुहानी इत्तिहाद .....50
सय्यदना मसीह दरवेश ना थे।.....52
सय्यदना मसीह का दम .....52
सातवाँ
बाब.....
.....57
मसीही तहसील .....57

मसीह कलीसिया की ज़िंदगी .....63

# अल-तरीक़त

## पहला बाब

### ख़ुदा जो हमारा वतन है

बाअज़ मुसलमानों में आजकल ये मेला पाया जाता है, कि इस्लाम के ज़ाहिरी रसूम पर कम ज़ोर दिया जाये। उनका ख़्याल ये है कि शरीअत की तामील पर नावाजिब ज़ोर दिया जाता है और बातिनी सदाक़त को बहुत कुछ नज़र-अंदाज कर दिया गया है। वो ये चाहते हैं कि हक़ीक़त का तजुर्बा चाहीए। जहां रूह के तजर्रुद में दलील दम-ब-ख़ुद (खामोश) रह जाती है।

वो इस अम्र के तालिब हैं। कि दिल की हैकल (बैतुल्लाह) ख़ुदा का मस्कन हो। चुनान्चे जलाल उद्दीन रूमी ने ये फ़रमाया :-

**वाहिद हक़ीक़ी मस्जिद औलिया अल्लाह के दिल हैं**
**जो मस्जिद औलिया अल्लाह के दिलों में तामीर होती है**
**वो सब का माअबद है क्योंकि ख़ुदा वहां बस्ता है।**

बहुत मज़ाहिब में ख़ासकर दीने इस्लाम और दीने मसीहीय्यत में मग़रिब व मशरिक़ दोनों में ऐसे आदमी पाए जाते हैं जिन्होंने ने अपने बातिन में मुहब्बत व जाँनिसारी के अंदरूनी शोले की तरफ़ रुख किया। और इलाही मुहब्बत की आग से इस को मुश्तइल किया। वो सूफ़ी हैं अगरचे इस नाम को वो पसंद नहीं करते। अगर उनको ऐसे लोगों में शरीक करें जिनमें सूफियाना रूह पाई जाती है। तो शायद उनको एतराज़ ना होगा। वो इस ख़्याल में रहते हैं कि जो अश्या मुरई (यानी दिखने वाली जो चीजें) हैं वो फ़ानी (ख़त्म होने वाली) हैं। लेकिन जो ग़ैर मुरई हैं (यानी जिसका वजूद हो लेकिन दिखाई ना दे) वो अज़ली अबदी (यानी हमेशा से है और ख़त्म होने वाली नहीं) है।

**तसव्वुफ़ क्या है?** अगरचे हक़ीक़ी सूफ़ी की सही तारीफ़ अहाता बयान से बाहर है, जैसे मादरज़ाद (पैदाइशी) ज़हीन की। क्योंकि इन दोनों के मिज़ाज दीगर लोगों के मिज़ाजों से मुतफ़र्रिक़ (अलग) होते हैं। तो भी कोशिश की जाती है कि इस के हक़ीक़ी रुझान को बयान कर सकें। तसव्वुफ़ की मुख़्तलिफ़ सूरतें तो हैं। बाज़ों का तसव्वुफ़ मुहब्बत और हुस्न का होता है और बाज़ों का फ़लसफ़े का। लेकिन हमारी ग़रज़ यहां दीनी तसव्वुफ़ से है जिसमें कई तरह के ख़यालात पाए जाते हैं। तो भी हम ये कह सकते हैं कि तसव्वुफ़ फ़ित्रत और रूह में ज़िंदा ख़ुदा की तहसील की कोशिश का नाम है। इस का वाहिद मुद्दआ (मक़्सद) ये है कि हक़ीक़ी अश्या ग़ाइत (असल चीजें) तक रसाई हासिल करे और ख़ुदा के साथ क़रीबी शराकत (रिश्ते) का हज़ (लुत्फ़) उठाए और कामिल इत्तिहाद और वस्ल हासिल करे।

हाल के मसीही मुसन्निफ़ों में से एक ने तसव्वुफ़ की ये तशरीह की। ख़ुदा के लिए इन्सान का जिबिल्ली (क़ुदरती, ज़ाती, हक़ीक़ी) एहसास उस की सारी शख़्सियत का ग़ालिब उसूल हो। यानी इन्सान का क़ल्ब (दिल), दिल और इरादा इस हयात और अज़लियत में ग़र्क़ हो जाये। जो ईलाही सूरत का महज़ रूबरू देखना ही नहीं बल्कि जलाल से जलाल तक इस सूरत पर तब्दील होते जाना है। ये ऐसी बसारत है जिसके सामने बाक़ी हर एक

बसारत महज़ साया है। गो ऐसी बसारत मादूद-ए-चंद ही को पूरे तौर से हासिल होती है, और बेज़बान सूफ़ियों का शुमार हमारे वहम व गुमान से कहीं ज़्यादा है जो ना तो अपना तजुर्बा बयान करने के क़ाबिल हैं ना उनको ये इल्म हासिल है कि वो है क्या? लेकिन जो आजकल सूफ़ी तजुर्बे के नाम से मौसूम है वो एक तरह के मिक़्नातीसी (अपनी तरफ खेंचने वाले) अमल का नाम है जिस के ज़रीये अक़्ल बे-हिस (बेहोश) हो जाती है और कुछ हालत ख़्वाब सी तारी हो जाती है। ये तो तसव्वुफ़ की एक बिगड़ी सूरत है।

(1) फ़ित्रत में ख़ुदा, पहली तारीफ़ में ये बयान किया गया है हक़ीक़त में सूफ़ी अपनी रूह और फ़ित्रत में ज़िंदा ख़ुदा की हुज़ूरी को महसूस करता है। ख़ुदा अपने आलम में है। उसको हम वहां देख सकते हैं और वही इन्सान उस का हज़ (लुत्फ़) उठा सकता है। पौलुस रसूल ने ये बयान दिया कि जो कुछ ख़ुदा की निस्बत मालूम हो सकता है, वो उनकी क़ुदरत से ज़ाहिर है। इसलिए कि ख़ुदा ने उस को उन पर ज़ाहिर कर दिया। **"क्योंकि उस की अनदेखी सिफ़तें यानी उस की अज़ली क़ुदरत और उलूहियत दुनिया की पैदाइश के वक़्त से बनाई हुई चीज़ों के ज़रीये से मालूम हो कर साफ़ नज़र आती हैं।"** (रोमीयों 1 बाब 20 से 21 आयत)

ख़ुदा हमा जा (हर जगह) हाज़िर व नाज़िर है जिस क़द्र वो फ़ित्रत से बाला है उसी क़द्र वो फ़ित्रत के अंदर है। वो अपनी लाज़वाल क़ुदरते ख़ालिक़ा दुनिया की हर शैय में ज़ाहिर कर रहा है और वो अपने आपको वैसा ही आशकार व नमूदार करता है। जैसे इन्सान अपने चेहरा के तबस्सुम (मुस्कुराहट) से अपनी रूह के हुस्न को ज़ाहिर कर सकता है।

हज़रत दाऊद ने ज़बूर की किताब में ख़ुदा की हुज़ूरी का ये ज़िक्र किया है :-

**7.मैं तेरी रूह से बच कर कहाँ जाऊँगा तेरी हज़ूरी से किधर भागूं?**
**8.अगर आस्मान पर चढ़ जाउं तो तू वहां है। अगर मैं पाताल में बिस्तर बिछाउं तो देख! तू वहां है।**
**9.अगर मैं सुबह के पर लगा कर समुंद्र की इंतिहा में जा बसूं।**
**10.तो वहां भी तेरा हाथ मेरी राहनुमाई करेगा और तेरा दहना हाथ मुझे सँभालेगा।**
**11.अगर मैं कहूँ कि यक़ीनन तारीकी मुझे छुपा लेगी**

**और मेरी चारों तरफ़ का उजाला रात बन जाएगा।**
**12.तो अंधेरा भी तुझ से छिपा नहीं सकता।**
**(ज़बूर 139: 7 से 12 आयत)**

इस इबारत में हज़रत दाऊद ऐसे शख़्स का ख़्याल कर रहा है जो अपने गुनाह के एहसास की वजह से अपने तईं ख़ुदा क़ादिर-ए-मुतलक़ की हुज़ूरी से छुपाना चाहता है। अगरचे वो दुनिया की इंतिहा तक चला जाये तो ख़ुदा वहां भी मौजूद पाएगा। ख़्वाह वो आसमानों के आस्मान तक चढ़ जाये या क़ार (गहराई) समुंद्र में उतर जाये तो भी यही हाल पाएगा। ये मफ़रूर (भागा हुआ शख्श) क़ादिर मुतलक के हाथ से बच नहीं सकता। तारीकी जो अक्सर मफ़रूरों (भागे हुए) की पुश्तपनाह है वो भी ख़ुदा के सामने दरख़शां है।

ज़बूर की किताब में फ़ित्रत का नज़ारा भी अजीब तरह से पेश किया गया है इस्राईल के शीरीं गाने वाले दाऊद ने ये फ़रमाया :-

**1.ऐ मेरी जान तू ख़ुदावन्द को मुबारक कह। ऐ ख़ुदावन्द मेरे ख़ुदा तू निहाईत बुज़ुर्ग है।**
**तू हशमत और जलाल से मुलब्बस है।**
**2.तू नूर को पोशाक की तरह पहनता है और आस्मान को साएबान की तरह तानता है।**
**3.तू अपने बालाख़ानों के शहतीर पानी पर टिकाता है। तू बादिलों को अपना रथ बनाता है। तू हवा के बाज़ूओं पर सैर करता है।**
**(ज़बूर 104: 1 से 3 आयत)**

ख़ुदा का लिबास दुआ और ध्यान के ज़रीये से मज़मूर् नवीस की बसारत ऐसी साफ़ हो गई थी, कि उस ने अपने आपको इस से मामूर पाया।

शायर का दिल आईने की तरह होता। और उस में दुनिया का अक्स पड़ता है। उस की निगाहें फ़ित्रत ख़ुदा का लिबास है, और हाज़िर व नाज़िर ख़ुदा का मुकाशफ़ा है। ख़ल्क़त के ये आला मअनी हैं। कुल आलम ख़ुदा का लिबास है। हज़रत दाऊद के वक़्त से हज़ारहा लोगों ने अपने तजुर्बात को ऐसे ही अल्फ़ाज़ में बयान किया। बुज़ुर्ग हलारी ने ये पूछा, **कौन शख़्स है जो फ़ित्रत पर निगाह डाले और ख़ुदा को ना देखे?**

बाज़ औक़ात माद्दीयह (ज़ाहिरी सोच के) ख़्याल के लोगों ने भी पहाड़ों की क़ुदरती शान व शौकत या समुंद्र की ला-इंतिहा सुख़ामत को या नदी के किनारे एक नन्हे से फूल को देखकर उन की ज़बान-ए-हाल से ऐसी बातें सुनीं जिनको हम अल्फ़ाज़ में बयान नहीं कर सकते। इन अश्या का लुत्फ़ सिर्फ नबी शाइरों ही को हासिल नहीं होता। बल्कि अक्सर अवाम में से ख़ल्क़त के अजाइबात देखकर सर बसजूद हो गए और ईमान ला कर ऐसे कलिमात ज़बान पर लाए।

**ज़मीन तो आस्मान से पुर है**
**और हर झाड़ी ख़ुदा के नूर से मुश्तइल है।**

हम रोज़मर्रा की ज़िंदगी में ये ख़्याल रखें कि ये फ़ानी जहान वो शीशा है जिसमें उस अज़ली (हमेशा से जिसकी कोई इब्तिदा ना हो) की झलक दिखाई देती है। ग़ैर मुरई जहान (यानी ना दिखने वाली दुनिया) को वहां देख और मालूम कर सकते हैं। ग़ैर मुरई (यानी वह चीज जिसका वजूद है लेकिन दिखाई ना दे) एसा ख़ुदा वहां नज़र आता है।

**ख़ुदा का चेहरा,** क्या फ़ित्रत का ये रुहानी नज़ारा क़ुरआन में नज़र नहीं आता। यानी ख़ुदा की हुज़ूरी (मौजूदगी) का ये एहसास? अक्सर उलमा ये मानते हैं कि अल्लाह का आम तसव्वुर ऐसे उलमा-ए-दीन के ज़रीये सदीयों से चला आया है जिन्होंने वहदत ईलाही के रूखे फीके मसले को साबित करने में जान तोड़ कर ज़ोर लगाया। लेकिन इस में शक नहीं कि मुहम्मद साहब का मिलान-ए-तबाअ (फितरत का रुझान) तसव्वुफ़ की तरफ़ था। जब कभी आँहज़रत ने फ़ित्रत पर निगाह डाली तो सारी ख़ल्क़त में ज़ात ईलाही (खुदा की मौजूदगी) का मुशाहिदा किया। इस का उन पर बहुत असर हुआ और उन्होंने अक्सर वजह अल्लाह के तौर पर इस का ज़िक्र किया :-

وَلِلَّهِ الْمَشْرِقُ وَالْمَغْرِبُ فَأَيْنَمَا تُوَلُّوا فَثَمَّ وَجْهُ اللَّهِ

**और मशरिक़ और मग़रिब सब ख़ुदा ही का है, तो जिधर तुम रुख करो, उधर ख़ुदा की ज़ात है। (सूर बक़रह 2:115)**

ये जुम्ला अक्सर क़ुरआन में आया है। प्रोफ़ैसर मैक्डानल्ड साहब कहते हैं कि इस ख़्याल का मुहम्मद साहब पर बहुत असर हुआ और इस का बार-बार उन्होंने ज़िक्र किया। माबाअ्द (बाद में) इस्लाम ने भी इस ख़्याल को ले लिया क्योंकि जलाली ज़िंदगी के इसरार इस में मर्कूज़ थे।

ख़ुदा का ये ग़ालिब एहसास जो दीनदारों की रूहों में आम तौर से पाया जाता है। हक़ीक़ी ताज़ीम अफ़ज़ा और इबादत अफ़रोज़ तजुर्बा है और जहां तक किसी की ज़िंदगी पाकीज़ा होगी और जहां तक किसी को रुहानी सदाक़त का शौक़ होगा इसी निस्बत से ये तजुर्बा भी कम व बेश होगा। लेकिन यहां इस अम्र की बड़ी एहतियात दरकार है कि निशानों की इबादत कहीं हक़ीक़ी परस्तिश की जगह ग़सब ना कर ले। क़दीम आर्या लोगों में आफ़्ताब तुलूअ, हवाओं, रअद और बर्क़ (बिजली) को देखने से उन में इन बाकुदरत ताक़तों की हुज़ूरी का ऐसा यक़ीन हो गया, कि उन्होंने इनको देवता मान लिया और कस्रत इलल्लाह (बहुत सारे अल्लाह या ख़ुदा) का मसअला क़ायम कर दिया। लेकिन मसीही दीन इस अम्र पर ज़ोर देता है कि गो आलम उलूहियत के हज़ारहा निशानों से भरपूर है, लेकिन ख़ुदा उनसे ऐसा ही बालातर है। जैसे कि हमारी रूह बदन से आला है।

एक और ग़लती से भी बचना चाहिए, और जो लोग ये मानते हैं कि चूँकि ख़ुदा हमा जा (यानी हर जगह) हाज़िर और हमा जा (हर जगह) सारी है तो वो ख़ुद बख़ुद अपने पूरे जलाल के साथ मुन्कशिफ़ (जाहिर) होगा। ऐसे अक़ीदे की मुख़ालिफ़त जिस क़द्र की जाये थोड़ी है। इस आलम-ए-असबाब में एक हैरत-अंगेज़ अम्र ये है कि गो हमारे बदनों, और हैवानात व नबातात (जानदार, जानवर, और दरख़्त) के अजसाम (जिस्मों) के ज़र्रात सब क़वानीन फ़ित्रत के मुताबिक़ ख़ुद बख़ुद अमल करते रहते हैं। और ये क़वानीन की तबीयत का इज़्हार हैं, **लेकिन आदमी का इरादा ऐसा नहीं। इन्सान ऐसी ख़ुद बख़ुद चलने वाली मशीन नहीं। बल्कि अक्सर ये ख़ुदा के अहकाम की ख़िलाफ़वर्ज़ी करता है। उस के इरादे का रुजहान बदी (यानी बुराई) की तरफ़ हो जाता है और अपने ख़ालिक़ के इरादे को छोड़ देता है।** और इस तरह से आदमी की रूह में ईलाही ज़िंदगी और मुहब्बत का नश्व व नुमा (तरक्क़ी का होना) रुक जाता है। ये तो सच्च है ख़ुदा हमा जा (हर जगह) हाज़िर तो है लेकिन जब तक तस्लीम मुतलक़ के ज़रीये हमारी मर्ज़ी ख़ुदा की मर्ज़ी के मुताबिक़ ना हो जाये इन्सान की रूह ख़ुदा की हुज़ूरी (मौजूदगी) की हक़ीक़त को पूरे तौर से पहचान नहीं सकती। और जब तक इन्सान की अख़्लाक़ी और रुहानी हालत बदल ना जाये ऐसा हो नहीं सकता। इसलिए बाइबल में हर इन्सान को ये ताकीद की गई है कि फ़ौरन उस शैय को इख़्तियार करे जिसके बाइस ख़ुदा के साथ उस का ज़िंदा और रुहानी ताल्लुक़ पैदा हो जाये। लेकिन बाइबल ने इस अम्र को भी वाज़ेह कर दिया कि ऐसे फ़ेअल के लिए ख़ुदा के रूहुल-क़ुद्दुस की ज़रूरत है ताकि इस तस्लीम मुतलक़ के काम में हमारी मदद करे। क्योंकि तबई ज़िंदगी के वसाइल

ऐसी हालत पैदा करने के लिए ग़ैर मुक्तफ़ी (ना काफी) हैं जो कि ख़ुदा को पसंद हो।

हमारे आका व मौला सय्यदना मसीह ने इस का बयान यूँ फ़रमाया ; **अगर कोई मुझसे मुहब्बत रखे तो वो मेरे कलाम पर अमल कर लेगा और मेरा बाप उस से मुहब्बत रखेगा और हम उस के पास आएँगे और उसके साथ सुकूनत करेंगे।"** (इंजील मुक़द्दस रावी हज़रत युहन्ना बाब 14:23 आयत) इन अल्फ़ाज़ में नौ इन्सान के रुहानी तक़ाज़े की तश्फ़ी (तसल्ली) का तरीका पाया जाता है और आदमी की रूह में ख़ुदा की हक़ीक़ी सुकूनत की तक्मील का रास्ता दिखाया गया है। इस की रुहानी बुनियाद मुहब्बत इताअत, तस्लीम और रिफ़ाक़त पर है, दिल में ख़ुदा के ऐसे ही एहसास का मज़ीद बयान माबाअ्द अबवाब (आगे के बाबों) में किया जाएगा।

ज़माना-ए-हाल में बड़ी ज़रूरत ये है कि लोगों के अंदर ऐसी सरगर्मी और जोश पैदा होता कि रूह की भर पूरी की हक़ीक़त को पहचान सकें। उनको इस अम्र के जानने की ज़रूरत है कि गुनाह की तारीकी के पर्दों के ज़रीये से हमारी रूहों की बसारत पर ऐसा गहरा असर होता और उनको अंधा कर देता है। **ख़ुदा और रूह को गुनाह ही जुदा कर देता है। जब तक ये पर्दे दूर ना हों तब तक ख़ुदा का दीदार और कामिल बसारत हासिल हो नहीं सकते।** तसव्वुफ़ की ये हक़ीक़ी सूरत ही ज़िंदगी और क़ुदरत रखती है हमने इसे हक़ीक़ी सूरत कहा क्योंकि हम इन वज्द व रक़्स की और रियाज़ती (सूफियाना जिस्मानी वर्जिश और वजीफों के अमल की) सूरतों को पसंद नहीं करते जिनको आजकल लोग तसव्वुफ़ समझ रहे हैं। लेकिन हम ये मानते हैं कि ख़ुदा के साथ हक़ीक़ी रिफ़ाक़त हक़ीक़ी बलूग़त के लिए लाज़िमी है। और उसे वही शख़्स हासिल कर सकता है जो अपने आपको ऐसा पाक करता है, जैसे कि ख़ुदा ख़ुद पाक है।

**बेचैनी और बे इत्मीनानी जो चारों तरफ़ नज़र आती है इस की वजह क्या है? वजह ये है कि ख़ुदा के बग़ैर रूह को इत्मीनान हासिल नहीं हो सकता। वो मुहब्बत से हमारे पास आना चाहता है ताकि हमारी ज़िंदगी के खला (अधूरे और अकेलेपन) को भर दे बशर्ते के हम उसे क़ुबूल कर लें।** हमारे आराम का आस्मानी बंदर (गाह) (किनारा) वही है। उसी ने अज़लियत (हमेशगी) को हमारे दिल में नक़्श कर दिया इन्सान जिलावतनी की हालत में रहा है अब उसे वतन को आना है, लेकिन वतन आने का रास्ता उस को नहीं मिलता।

शुमाली अफ्रीका के आलिम जय्यद आगस्तीन ने ये दुआ मांगी थी, और वो दुआ हम में से हर एक की ज़बान से निकलनी चाहीए :-

**"ऐ ख़ुदा तू ने हमें अपने लिए बनाया**
**और हमारा दिल बेचैन है**
**जब तक तुझमें चैन ना पाए।"**

# दूसरा बाब

## तसव्वुफ़

मुसलमान सूफ़ियों की ये ताअलीम है कि इन्सान कैसे ख़ुदा का दीदार हासिल कर सकता है और वज्द और मुहब्बत के ज़रीये ख़ुदा के साथ कामिल वस्ल हासिल कर सकता है। उस के आला ख़्याल और दीनदाराना एहसास तो बहुत नफ़ीस हैं। उनकी रियाज़त (जिस्मानी सख्त वार्जिशे) और अख़्लाक़ी नीयत तो क़ाबिल-ए-तारीफ़ है। इस्लाम के नशव व नुमा व तरक़्क़ी के मुतालआ करने वालों के लिए इस की तारीख़ ख़ाली अज़ दिलचस्पी ना होगी। इस के मुताल्लिक़ इस क़द्र किताबें लिखी गई है कि इस्लामी दुनिया में इस की नज़ीर (मिसाल) नहीं मिलती।

## इस का आग़ाज़

तसव्वुफ़ की ज़रूरत ही क्या थी? शुरू इस्लाम ही से इस के आग़ाज़ के आसार मिलते हैं। **इब्ने ख़ल्दून मुसलमान मुअर्रिख़ ने बयान किया** कि पहले पहल मुहम्मद साहब के अस्हाब ने तसव्वुफ़ की ताईद व हिमायत की और उसे सदाक़त व नजात का रास्ता कहा। चुनान्चे उस का बयान ये है। दीनदारी में मेहनत करना, और ख़ुदा की ख़ातिर सब कुछ तर्क करना, दुनियावी तमाशाओं और नज़ारों से इज्तिनाब करना (बचना), ऐश व इशरत और दौलत व हशमत को छोड़ना। क्योंकि इन्सान इन्हीं का दिल-दादा होता है। तर्क सोहबत और गोशा-नशीनी (तन्हाई) इख़्तियार कर के ख़ुदा की इबादत में ज़िंदगी बसर करना तसव्वुफ़ के बुनियादी उसूल थे। इन्हीं का रिवाज सहाबा और उन मुसलमानों में था जो मुहम्मद साहब के ऐन बाद गुज़रे। लेकिन दूसरी पुश्त में और इस के बाद दुनियावी मज़ाक़ ने ग़लबा हासिल किया और हर तरह की आलूदगी से मुलव्वस हो गए। लेकिन जिन्होंने तज़किया नफ़्स को अपना मक़्सद ठहराया उन को सूफ़ी या तसव्वुफ़ का लक़ब मिला।

पस इस से साफ़ ज़ाहिर है कि दुनियादारी का ग़लबा तसव्वुफ़ के आग़ाज़ और तरक़्क़ी का एक बड़ा ज़रीया था। जिसकी वजह से तसव्वुफ़ एक इल्म बन गया। **पहले चार ख़लीफों की तल्वार ने जो फ़ुतूहात हासिल कीं उन के ज़रीये से अक्सर मुसलमानों में हुब दुनिया (दुनिया की मुहब्बत) ने बहुत दख़ल और ग़लबा हासिल कर लिया। लेकिन बाअज़ ऐसे लोग भी थे जो मुल्की साज़िशों और हुसूल दुनिया की रग़बतों से किनारे रहे।** ये दीनदार लोग गहरी रुहानी ज़िंदगी पर बहुत ज़ोर देते थे। उन अवाइल अय्याम में भी ऐसे लोग थे, जो लफ़्ज़ शराअ, मुहब्बत, रिफ़ाक़त और वस्ल वग़ैरह अल्फ़ाज़ की ख़ूबी को पहचानते और अपने अंदरूनी रुहानी तजुर्बे में उन की तलाश करते थे। वो इस दुनिया के मर्कज़ या क़ल्ब (दिल) के इर्फ़ान की तहसील के आर्ज़ूमंद थे।

# दीगर तासीरात

इब्ने ख़ल्दून के बयान के मुताबिक़ अगरचे सूफ़ी अपनी इस ताअलीम का चशमा इस्लाम ही में ढूंढता है। तो भी इस के नशव व नुमा व तरक़्क़ी का सुराग़ ग़ैर मुस्लिम चश्मों में मिलता है। अरबी के एक यूरोपीयन आलिम का ख़्याल है कि सूफ़ी ख़यालात का सुराग़ बहुत कुछ मग़रिब के मसीही सूफ़ियों और इल्म ईलाही में पाया जाता है और नीज़ फ़ारस और हिन्दुस्तान के सूफ़ियों और वेदांतियों की ताअलीम में। सूफ़ी वाअज़ों का क़दीम मजमूआ

जो हम तक पहुंचा है वो तो बहुत कुछ मसीही किताबों पर मबनी है। लेकिन तसव्वुफ़ की माबाअ्द (बाद की) इस्तिलाहात हिंदूओं की किताबों से ली गई हैं।

इल्म फ़ारसी के एक यूरोपियन आलिम की भी यही राय है। वो कहता है, सूफ़ियों की ये ताअलीम यानी शख़्सी अनानीयत के आलमगीर रूह में फ़ना हो जाने का मसअला ज़रूर हिंदूओं से आया। उस की राय में ख़ामोशी का अह्द, और ज़िक्र और दीगर रियाज़तें उस ज़माने के मसीही राहिबों की तासीर और ताअलीम से ली गईं, बल्कि ख़ुद ये नाम सूफ़ी मसीही इस्तिलाह थी। क्योंकि जो लोग **मसीही फ़क़ीरों की तक़्लीद में सूफ़ या ऊन का लिबास ओढ़ते थे वो सूफ़ी कहलाने लगे।** ये लिबास इस अम्र का निशान था कि उन्होंने दुनिया की ऐश व इशरत को तर्क कर के ज्ञान ध्यान की ज़िंदगी को इख़्तियार कर लिया था।

# तारीफ़

सूफ़ी ताअलीम का मुफ़स्सिल बयान करना तो यहां ना-मुम्किन है। अलबत्ता हम इस की क़द्र इस अम्र में तस्लीम करते हैं कि रूह की भरपूरी का ये एक तरीक़ा है। सबसे क़दीम तारीफ़ जो सूफ़ी या तसव्वुफ़ की पाई जाती है वो ये है, "ये ईलाही हक़ीक़तों का इदराक है।" इस के बाद जितने मुँह गुज़रे उतनी तारीफ़ें इख़्तिरा हुईं। **इमाम ग़ज़ाली** ने ये बयान किया :-

"अज़ रुए क़ियास इस का नतीजा ये है रूह ऊपर बुलंदी पर चढ़े और उस की नाक़िस और अदने ख़साइस व सिफ़ात दूर हो जाएँ और ख़ुदा की तबीयत ही में महव (गुम) हो कर ख़ुदा के तसव्वुर ही को अपना सारा ज़ेवर बना ले। एक दूसरे शख़्स ने ये तारीफ़ की, "इस ज़ाहिरी दुनिया के नुक़्स को देखना बल्कि उस के ध्यान में हर नाक़िस की तरफ़ से आँख बंद कर लेना जो वाहिद हर तरह के नुक़्स से मुबर्रा है, यही तसव्वुफ़ है।"

ये वो दीनी ताअलीम है जो इस्लामी शरीअत और दीगर इबादती तरीक़ों से आला और ख़ुदा तक पहुंचने का सीधा रास्ता है। अगरचे बहुतों की ये राय भी है कि इस्लामी अक़ाइद और रसूम हमेशा ईमान की बुनियाद रहेंगे। अगरचे हम ये कह सकते हैं कि इमाम ग़ज़ाली ने मुसलमानों के दर्मियान तसव्वुफ़ को एक ख़ास दर्जा अता किया तो भी उन्होंने बड़े ज़ोर से ये ताकीद की कि मुन्कशिफ़ दीन से जुदा कोई हक़ीक़ी तसव्वुफ़ हो नहीं सकता, क्योंकि ख़ुदा पर ईमान लाने और उस की मर्ज़ी का इल्म हासिल

करने के लिए कोई तवारीख़ी बुनियाद चाहीए। इसलिए सूफ़ी को चाहीए कि वुह किसी ऐसी बात को ना माने और ना क़ुबूल करे जो इस मकाशफ़े के ख़िलाफ़ हो। बक़ौल इस दीन के फ़राइज़ से आज़ाद हो सकता है। उन्होंने एक हदीस का हवाला देकर ये फ़रमाया था कि दोज़ख़ ऐसे फ़क़ीरों से भरा पड़ा है, जो मुन्कशिफ़ दीन से बर्गशता हो कर अपने ईमान के जहाज़ को तबाह कर बैठे।

लेकिन एक ये सवाल पैदा होता है, जब मुहम्मद साहब ने इस क़द्र वाज़ेह कर दिया कि क़ुरआन आख़िरी मुकाशफ़ा था और इस्लाम एक कामिल अक़ीदा था तो ये कैसे मुम्किन था कि हर शख़्स सदाक़त का एक नया और गहरा मुकाशफ़ा हासिल करे और ख़ुदा से आज़ादाना बिलावसातत् तकल्लुम कर सके जो कि अहले तसव्वुफ़ के नज़्दीक हर शख़्स हासिल कर सकता है? और **"जबकि मुहम्मद साहब ने अपने दिल में इस अम्र को महसूस कर लिया कि वो और उन के सब ताबईन ख़ुदा से ऐसा रिश्ता रखते थे जैसे ग़ुलाम का अपने सुल्तान से होता है। ऐसा ख़ुदा जिसके पास ऐसे तौर से नहीं पहुंच सकते जैसे कि पुर मुहब्बत बाप के पास पहुंच सकते हैं।"** तो अहले इस्लाम ऐसे नाक़िस तसव्वुर को कैसे रख सकता था, कि ख़ुदा ना सिर्फ इन्सान के नज़्दीक बल्कि ऐन उस के दिल में आ सकता था?

मख़्फ़ी (छिपा) ना रहे कि इन्सान के दिल के तकाज़ात अक्सर उस के अक़्ली मसाइल से ज़्यादा सही होते हैं। बाज़ औक़ात मुहम्मद साहब में हक़ीक़ी सूफ़ी मिलान-ए-तबा (यानी फितरी झुकाव) पाया जाता था और उन को ये इल्म था कि ख़ुदा दूर भी था और नज़्दीक भी। गो वो अर्श मुअल्ले पर मुतमक्किन (बैठा) था तो भी वो ऐसा दोस्त था जो इन्सान की रूह के निहायत क़रीब था। अहले तसव्वुफ़ ने अपने ख़यालात की ताईद में चंद आयात क़ुरआनी भी पेश की हैं। मसलन बिला वसातत इल्हाम की बातिनी रुय्यत के बारे में उन्होंने क़ुरआन के इन अल्फ़ाज़ को पेश किया :-

وَعَلَّمْنَاهُ مِن لَّدُنَّا عِلْمًا

**"जिसको हमने अपने इल्म की ताअलीम दी।"** (सूर कहफ़ आयत 64)

उन के नज़्दीक जिस इल्म का यहां ज़िक्र हुआ वो ख़ुदा से इन्सान के अपने इल्म-ए-लदुन्नी (यानी वह इल्म जो बगैर दुनियावी उस्ताद के खुदा के फैज़ से हासिल हुआ हो) के ज़रीये बिलावसातत् इल्हाम था।

वो ये आयत भी पेश करते हैं :-

وَإِذَا سَأَلَكَ عِبَادِي عَنِّي فَإِنِّي قَرِيبٌ

**"जब मेरे बंदे मेरी बाबत तुझसे सवाल करें तो फ़िल-हक़ीक़त मैं बहुत नज़्दीक हूँ।"** (सूर अल-बक़रह आयत 186) और

الَّذِينَ آمَنُوا وَتَطْمَئِنُّ قُلُوبُهُم بِذِكْرِ اللَّهِ أَلَا بِذِكْرِ اللَّهِ تَطْمَئِنُّ الْقُلُوبُ الَّذِينَ آمَنُوا وَعَمِلُوا الصَّالِحَاتِ طُوبَى لَهُمْ وَحُسْنُ مَآبٍ

**"जो लोग ईमान लाते और जिनके दिल याद-ए-ख़ुदा से आराम पाते हैं (उनको) और सुन रखो कि ख़ुदा की याद से दिल आराम पाते हैं। जो लोग ईमान लाए और अमल नेक किए उनके लिए ख़ुशहाली और उम्दा ठिकाना है।"** (सूर रअद आयत 28)

लेकिन उन की मन भाती आयत ये है :-

وَلَقَدْ خَلَقْنَا الْإِنسَانَ وَنَعْلَمُ مَا تُوَسْوِسُ بِهِ نَفْسُهُ وَنَحْنُ أَقْرَبُ إِلَيْهِ مِنْ حَبْلِ الْوَرِيدِ

**"और हम ही ने इन्सान को पैदा किया है और जो ख़यालात उस के दिल में गुज़रते हैं हम उनको जानते हैं। और हम उस की रग जान से भी इस से ज़्यादा क़रीब हैं।"** (सूर क आयत 16)

इलावा अज़ीं (इसके इलावा) सूफ़ी साहिबान ख़्वाबों और हालत वज्द (यानी मस्त बेखुदी) के ज़रीये हासिल कर्दा इल्हाम पर भी बहुत ज़ोर देते हैं और इस के लिए वो मुहम्मद साहब की सनद पेश करते हैं जिसने फ़रमाया था, **"ख़्वाब नबुव्वत का छयालीसवां हिस्सा है।"** प्रोफ़ैसर मैक्डानल्ड साहब ने ख़्वाबों के इल्हाम के मुताल्लिक़ इस्लामी तसव्वुर का यूं बयान किया, ज़ी अक़्ल रूह अपनी फ़ित्रत ही से आलम रूहानी के इदराक (रूहानी समझ व फ़हम) की क़ुदरत रखती है और ये क़ुव्वत उस वक़्त भी अपना अमल करती है जब के इन्सान और उस के हवास हालत ख़्वाब में होते हैं लेकिन इस तरीक़े से सिर्फ तसव्वुरात ही उस को हासिल हो सकते हैं। इसलिए वो इन तसव्वुरात को बदन में ले आती है जिसके पास कि हवास-ए-बातिनी (रूहानी अंदरूनी होश) का पूरा सामान मौजूद है। फिर क़ुव्वत-ए-मुतख़य्यला (ख्याल की ताक़त) उन को क़ुव्वत हाफ़िज़ की कहानीयों से मुज़य्यन कर के मुनासिब तौर से पेश करती है।

## तसव्वुफ़ का तरीक़ा

तसव्वुफ़ में रूहानी नशव व नुमा (तरक्क़ी होने) के तरीक़े के बारे में चंद इस्तेलाहें मुक़र्रर हैं जो सूफ़ियों की ज़बान पर चढ़ी हुई हैं।

ये चार हम-वज़न इस्तेलाहें हैं और सूफ़ी नशव व नुमा (तरक्क़ी) की चार मंज़िलों को ज़ाहिर करती हैं, **शरीअत, तरीक़त, मार्फ़त, हक़ीक़त।** सूफ़ियों दरवेशों और फ़क़ीरों के नज़्दीक इनके अहम मअनी हैं। मसीही सूफ़ियों ने भी तीन इस्तलाहों से काम लिया :-

**एक को (Purgative) तज़किया नफ़्स**
**दूसरे को (Iluminative) तनवीर क़ल्ब (दिल)**
**तीसरे को (Unitive) वासिल कहते हैं।**

जो लोग नूर और ख़ुदा की मुहब्बत और ख़ुदा के साथ वस्ल (मिलने) की आरज़ू रखते हैं उन को इन्हीं मंज़िलों से गुज़रना पड़ता है।

तरीक़त की मअनी रास्ता है। जो इस रास्ते में क़दम रखता है वो सालिक कहलाता है। जिनको मुक़र्ररा मुक़ामात या मंज़िलें तै करनी पड़ती हैं। और उनको तै करने के बाद वो मंज़िल-ए-मक़्सूद तक पहुंचता है और वो मंज़िल-ए-मक़्सूद फ़ना फ़ील्लाह (ख़ुदा में गुम होने) की हालत है। ये मंज़िलें फ़िल-हक़ीक़त आला ज़िंदगी के मुख़्तलिफ़ पहलू हैं जिनको इन्सान तरह तरह की रियाज़तों (तक्लीफदेह मशक्क़त) और मुराक़िबों (हल्का ज़िक्र) के ज़रीये से हासिल कर सकता है। दरवेशों के मुख़्तलिफ़ फ़रीक़ इनको मुख़्तलिफ़ तौर से बयान करते हैँ। इसलिए उनको तर्तीब देना मुश्किल है। नक़्शबंदी फ़क़ीर चार मंज़िलें बयान करते हैं लेकिन दूसरे ख़ानदान उनको सात या आठ बताते हैं।

आम तौर पर इन मुक़ामात को हम यूँ तक़्सीम कर सकते हैं :-

| चहार चंद तसव्वुफ़ | रूह की सात मंज़िलें | रूह की कैफियतें |
|---|---|---|
| (1) **शरीअत** : जिस्मानी इन्सान की मंज़िल, जिसमें वो शरीअत की रसूम की पूरी पाबंदी करता है वो बातिनी तरीक़े से नावाक़िफ़ होता है। | उबूदीयत | तौबा |

| | | |
|---|---|---|
| (2) **तरीक़त :** इस मंज़िल में आदमी बातिनी इल्हाम हासिल करना शुरू करता है। उस की बदी और ग़लाज़त बतदरीज दूर होती जाती है। | इश्क़ | परहेज़, तर्क, इफ़्लास (ग़रीबी), सब्र |
| (3) **मार्फ़त :** इस मंज़िल में मुहब्बत से पैदा शूदा इर्फ़ान ईलाही बढ़ने लगता है | मार्फ़त | तवक्कुल अलल्लाह (यानी अल्लाह पर भरोसा) |
| (4) **हक़ीक़त :** इल्म-उल-यक़ीन जिसका अंजाम ये है कि इन्सान की अपनी मार्फ़त नेस्त (ख़त्म) हो जाती है। | वज्द, या हाल हक़ीक़त वस्ल, फ़ना | इत्मीनान |

# तीसरा बाब

## बातिनी तरीक़े की मंज़िलें

मसीही दीन में दीनदार ख़ुदा रसीदा अश्ख़ास का बहुत बड़ा शुमार रहा है, जिनको सूफ़ी पहचान और रुहानी लज़्ज़ात हासिल थीं। हर फ़रीक़ में ऐसे शख्सों की कमी नहीं। इन में से बाअज़ तो बड़े ख़ानदानी लोग थे और

बाअज़ आम मेहनती लोग। उनका इत्मीनान ख़ातिर आश्कारा है। ख़ुदा के साथ उन की रोज़ाना रिफ़ाक़त वैसी ही हक़ीक़ी है। जैसे वालदैन बीवी बच्चों और दोस्तों से रिफ़ाक़त होती है। वो बहैसीयत सूफ़ी अपना ख़्याल नहीं करते और ना कुल की तरह किसी सूफ़ी ज़ाबते के पाबंद होते हैं। फ़िल-हक़ीक़त वो ख़ुदा-परस्ती में और अपने हम-जिंस इन्सानों की हम्दर्दी में ऐसे अमली और सर-गर्म होते हैं कि वो नाम की भी परवाह नहीं करते बल्कि फ़िर्काबंदी के नाम को भी बुरा जानते हैं। किसी अंग्रेज़ मुसन्निफ़ ने क्या ख़ूब कहा है। मसीही होने के लिए सिर्फ ये लाज़िमी है कि वो वफ़ादार हो। लेकिन अव्वल दर्जे का मसीही होने के लिए उसे सूफ़ी बनना दरकार है।[1]

सूफ़ियों और दरवेशों की तरह दीगर मसीही सूफ़ियों ने भी अपनी ताअलीम को बाक़ायदा सिलसिले-वार कलमबंद किया। उन्होंने सूफ़ी की ग़ायत ये ठेहराई कि बतदरिज अमल के ज़रीये रूह का कामिल तवस्सुल ख़ुदा से हो जाये। **"उन्हें मालूम है कि दीन में बहुत बातें ऐसी हैं जो महज़ अक़्ल से तो दर्याफ़्त नहीं हो सकती हैं। वो रोज़ाना रूहानी तजुर्बे से ईलाही मुहब्बत का सबक़ सीखते हैं। इसलिए इनके ज़रीये मज़्हब ख़ुदा के साथ रिफ़ाक़त का एक तजुर्बा है।"**

# नज़रिये की तब्दीली

अस्ल वतन को वापिस जाने के लिए कौन सी मंज़िलों से गुज़रना होगा? सालिक जो तसव्वुफ़ के बातिनी तरीक़ में अल-हक़ की तरफ़ रुख कर के क़दम मारना चाहता है। उसे सबसे पहले तब्दीली दिल में से गुज़रना चाहिए उसे अपनी पहली ख़ुदग़रज़ी और ग़ैर हक़ीक़ी ज़िंदगी की तरफ़ से रुगरदानी करनी होगी। इस रुगरदानी से उस के नज़रिये में तब्दीली होगी। और रूह आला जलाल की नामालूम ज़िंदगी की तरफ़ निगाह जमाती है और इस रोया (कश्फ़) से इश्क़ पैदा कर लेती है। हम बिलाअंदेशा (बगैर शक के) ये कह सकते हैं कि आला दर्जे की कोई दीनी ज़िंदगी इस इस्तिक़लाल और तस्लीम मुतलक़ के ज़मानों के बग़ैर नहीं होती।

ये हालत या तब्दीली ख़ातिर का तजुर्बा सूफ़ियों पर ही महदूद नहीं। ये तो फ़ैज़-ए-आम है। अलबत्ता मुख़्तलिफ़ अश्ख़ास में मुख़्तलिफ़ तौर से पाया जाता है। मुम्किन है कि ये अक़्ली या अख़्लाक़ी या जज़्बाती हो। ये अज़ सर-ए-नौ (नए सिरे से) ख़ुदा की तरफ़ रुजूअ करना है। अगर ये

---

[1] *Dr J.Watson – The Upper Room*

हक़ीक़ी हो, तो उमूमन ये ऐसी हालत या हालतें होंगी। जैसे रबिन्द्र नाथ टेगोर की ज़िंदगी में गुज़रा जबकि एक मौक़े पर कलकत्ता के एक बाज़ार में उस पर एक ऐसी हालत तारी हो गई जिसकी निस्बत उस ने ये बयान किया, **"एक सख़्त हिजाब उठ गया, और जो कुछ मैंने देखा वो ज़ूलजलाल था। सारा जहान एक ज़ूलजलाल मौसीक़ी, एक अजीब नज़्म था।"**

**इमाम ग़ज़ाली** ने अपनी एक किताब में अपनी तब्दीली का उम्दा बयान लिखा है। ये ख़ुदा की तरफ़ दानिस्ता हरकत थी, इस तब्दीली में उस ने मुफ़स्सला-ज़ैल उमूर को दर्ज किया :-

ख़ुदा की नाराज़गी का ख़ौफ़, वस्ल की आरज़ू, तब्दीली नज़रिया, तौबा, रूह में अलवी और सिफ्ली अनासिर की जंग, तस्लीम और ख़ुदा के इश्क़ का पैदा होना। इमाम ग़ज़ाली का जो तजुर्बा था वो बहुत सूफ़ियों और मसीहीयों का तजुर्बा भी हुआ, और ऐसी तब्दीली लाज़िमी है।

**इमाम ग़ज़ाली लिखते हैं,** कि सारे मुसलमान ये ईमान लाने का इक़रार करते हैं। कि ख़ुदा का दीदार इन्सानी ख़ुशी का सरताज है क्योंकि शरीअत में इस का यही बयान आया है। लेकिन फिर भी बहुतों में ये सिर्फ़ ज़बानी इक़रार ही है जिससे उन के दिलों में कोई तड़प पैदा नहीं होती। ये बिल्कुल अम्र तिब्बी है। क्योंकि इन्सान कैसे उस शैय (चीज) की आरज़ू रख सकता है, जिसका उसे कोई इल्म हासिल नहीं? ये तो सच्च है, आदमी रुहानी चीज़ों की आरज़ू कैसे रख सकता है अगर रूह की आँख में उस के हुस्न की झलक ना पड़ी हो? इस रूहानी हुस्न को बेदार करना और जिलाना चाहीए।

## तौबा

जब तसव्वुफ़ रूह की इस हाजत (जरुरत) को मान लेता है कि वो ख़ुदा के हुज़ूर अपने त्यों नालायक़ व गुनेहगार जान है तो वो हक़ीक़ी दीन के एक बुनियादी उसूल पर ज़ोर देता है और तौबा की ज़रूरत को महसूस करता है। मसीही दीन में ये एक बुनियादी उसूल है।

## तौबा क्या है?

कैंब्रिज यूनीवर्सिटी के फ़ारसी प्रोफ़ैसर साहब ये कहते हैं कि अज़रूए तसव्वुफ़ तौबा रूह की बेदारी है लापरवाई के ख़्वाब से। यूं ख़ताकार अपनी बद राहों से आगाह हो कर अपनी गुज़श्ता ना-फ़रमानी पर पशिमाँ होने

लगता है, मगर वो उस वक़्त तक फ़िलवाक़े ताइब नहीं हो सकता। जब तक कि वो उस गुनाह या उन गुनाहों को तर्क ना कर दे। जिनसे वो वाक़िफ़ हो गया है। और अज़्म बिल जज़म (जानबूझ कर इरादे के साथ) ना करे कि आइन्दा वो इन गुनाहों की तरफ़ कभी ऊद ना करेगा। अगर वो अपने इस अह्द को पूरा करने में क़ासिर रहे तो वो फिर ख़ुदा की तरफ़ रुजू करे। जिसकी रहमत ला-इंतिहा है। किसी मशहूर सूफ़ी का ज़िक्र है, कि उस ने सत्तर दफ़ाअ तौबा की और सत्तर दफ़ाअ ही वो गुनाह में मुब्तला हुआ। क़ब्लअज़ीं कि उस ने आख़िरी मुस्तक़बिल तौबा की। ऐसे ताइब शख़्स को चाहीए कि हत्तु-उल-मक़्दूर जिन का उस ने नुक़्सान किया है उन की तलाफ़ी कर दे।[2] बिलाशक तौबा का ये आला तसव्वुर है।

मसीही दीन ने भी रूह की इस ज़रूरत पर ज़ोर दिया कि मुहब्बत, ज़िंदगी और पाकीज़गी के रास्ते में क़दम धरने से पेशतर आदमी को ख़ुदा के सामने तौबा करना चाहिए। और बाइबल में ऐसे लोगों की मिसालें कस्रत से पाई जाती हैं जिन्होंने अपने गुनाहों से पछता कर सच्ची तौबा की। ज़बूर की किताब में ख़ासकर ऐसे ताइबों का ज़िक्र आया है। इस किताब में कई मज़ामीर ऐसे हैं जो तौबा के मज़ामीर कहलाते हैं।

हज़रत दाऊद ने एक सख़्त गुनाह में मुब्तला होने के बाद ये ज़बूर लिखा, जो एक दुआ है :-

**1 ऐ ख़ुदा अपनी शफ़क़त के मुताबिक मुझ पर रहम कर। अपनी रहमत की कस्रत के मुताबिक मेरी ख़ताएँ मिटा दे।**
**2 मेरी बदी को मुझ से धो डाल और मेरे गुनाह से मुझे पाक कर।**
**3 क्योंकि मैं अपनी ख़ताओं को मानता हूँ और मेरा गुनाह हमेशा मेरे सामने है।**
**4 मैं ने फ़क़त तेरा ही गुनाह किया है और वो काम किया है जो तेरी नज़र में बुरा है ताकि तू अपनी बातों में रास्त ठहरे और अपनी अदालत में बे ऐब रहे।**
**5 देख मैं ने बदी में सूरत पकड़ी और मैं गुनाह की हालत में माँ के पेट में पड़ा।**

[2] *Reynold A. Nicholson, The Mystic of Islam p.3031 (More Info) https://en.wikipedia.org/wiki/Reynold_A._Nicholson*

6 देख तू बातिन की सच्चाई पसंद करता है और बातिन ही में मुझे दानाई सिखाएगा।
7 ज़ूफ़े से मुझे साफ़ कर तो मैं पाक हूँगा। मुझे धो और मैं बर्फ़ से ज़्यादा सफ़ैद हूँगा।
8 मुझे ख़ुशी और ख़ुर्रमी की ख़बर सुना ताकि वो हड्डियां जो तू ने तोड़ डाली हैं शादमान हो।
9 मेरे गुनाहों की तरफ़ से अपना मुंह ना फेर ले और मेरी सब बदकारी मिटा डाल।
10 ऐ ख़ुदा मेरे अंदर पाक दिल पैदा कर और मेरे बातिन में अज़-सर-नौ मुस्तकीम रूह डाल।
11 मुझे अपने हुज़ूर से खारिज ना कर और अपनी पाक रूह को मुझ से जुदा ना कर।
12 अपनी नजात की शादमानी मुझे फिर इनायत कर और मुस्तइद रूह से मुझे सँभाल।
13 तब मैं ख़ताकारों को तेरी राहें सिखाउंगा और गुनाहगार तेरी तरफ़ रुजूअ करेंगे।
14 ऐ ख़ुदा ऐ मेरे नजात बख़्श ख़ुदा मुझे ख़ून के जुर्म से छुड़ा तो मेरी ज़ुबान तेरी सदाक़त का गीत गाएगी।
15 ऐ ख़ुदावन्द मेरे होंटों को खोल दे तो मेरे मुंह से तेरी सताईश निकलेगी।
16 क्योंकि कुर्बानी में तेरी खुशनूदी नहीं वर्ना मैं देता। सोख़्तनी कुर्बानी से तुझे कुछ ख़ुशी नहीं।
17 शिकस्ता रूह ख़ुदा की कुर्बानी है। ऐ ख़ुदा तू शिकस्ता और ख़स्ता दिल को हक़ीर ना जानेगा। (ज़बूर 51)

इस दुआ में आरिज़ी अफ़्सोस व पशेमानी से बढ़कर एहसास पाया जाता है। मज़मूर् नवीस दोनों हाथों से ख़ुदा का दामन पकड़े है, और ये आरज़ू है कि ख़ुदा की हुज़ूरी उस की रूह में क़ायम रहे क्योंकि इसी से पाक दिल पैदा हो सकता और गुनाहों की माफ़ी ख़ुशी व ख़ुर्रमी बहाल हो सकती है।

# नफ़्सकुशी

तर्क-ए-दुनिया की ज़रूरत पर ज़ोर देते हुए तसव्वुफ़ एक क़दम और आगे बढ़ाता है। सालिक अपने तईं दुनिया से अलग करने के लिए और दुआ व ध्यान की ज़िंदगी बसर करने के लिए इफ़्लास (ग़रीबी) को इख़्तियार करता है। इसलिए ऐसे नामों से ख़ुशी हासिल होती है। मसलन फ़क़ीर, दरवेश वग़ैरह और जब उसे मरक़ा या गुदरी (مرقعہ یا گدڑی) मिलती है। तो ख़ुशी के मारे उछल पड़ता है। इस मरक़ा के लिए इन फ़क़ीरों को बहुत शौक़ होता है। मसीही तसव्वुफ़ में भी इस क़िस्म के फ़क़ीर पाए जाते हैं। अलबत्ता मुसलमान सूफ़ियों से इस अम्र में मुतफ़र्रिक़ (अलग) हैं क्योंकि इस में ये फ़क़ीरी नहीं। क्योंकि मसीही दीन नफ़्सकुशी पर ज़ोर नहीं देता बल्कि नफ़्स की सफ़ाई और तरक़्क़ी पर। मुसलमान और मसीही सुफ़ीयों में ये बड़ा फ़र्क़ है। कामिल इन्सान का तसव्वुर मसीही दीन में ये है कि वो अपनी शख़्सीयत को भूल ना जाये, बल्कि उसे आला दर्जे तक पहुंचाए और ऐसी ही कामिल शख़्सीयत पूरे तौर से मुशख़्ख़स ख़ुदा की ख़ुशहाली का हज़ (लुत्फ़) उठा सकती है।

हमारे आक़ा व मौला सय्यदना मसीह ने ऐसी फ़क़ीरी की ताईद नहीं की इन का कभी ये मंशा ना था कि आदमी को उस की तमद्दुनी और मजलिसी ज़िंदगी और मामूली पेशों से हटा दे लेकिन वो अपने ताबईन (मानने वालों) से ये तवक़्क़ो रखते थे कि वो ज़मीन के नमक और ऐसा नूर बन जाएं जो तारीक जगहों में चमके। वो ये चाहता था कि उस के शागिर्द दुनिया में रहते हुए बदी से महफ़ूज़ रहें और उस ने उन के महफ़ूज़ रहने के लिए दुआ भी की। (युहन्ना 17 बाब 15 आयत)

ना उस ने कभी गद्दागरी की ताईद की वो ग़ालिबन इस सूफ़ी क़ौल से इत्तिफ़ाक़ राय ज़ाहिर करता कि माल जमा करने की आरज़ू तुम्हें तारीकी में रखेगी। क्योंकि उस ने ख़ुद ये फ़रमाया कि दौलतमंद का आस्मान की बादशाहत में दाख़िल होना कैसा मुश्किल है। दौलतमंद होने की ख़ुशी ख़ुदा के कलाम को घोंट लेती है और वो बे फल साबित होता है लेकिन अगर किसी के पास दौलत हो और वो ख़ुदग़रज़ी की वजूहात से ना इसे फ़ुज़ूल उड़ाए ना बख़ीलों की तरह उसे जमा करे तो वो क़ाबिल एतराज़ नहीं जबकि ख़ुदा के ख़ानसामां के तौर पर वो उसे सदाक़त और रास्तबाज़ी की सल्तनत के फैलाने के लिए इस्तिमाल करता है।

शेख़ सादी ने गुलसिताँ में ये लिखा..... "फ़क़ीरी लिबास की तब्दीली का नाम नहीं। मरक़ा, (مرقع) तस्बीह और गुडरी से किया फ़ायदा? ऐसे बुरे कामों से परहेज़ कर जो तुझे आलूदा करते हैं, अपने काम में मेहनत कर और जो लिबास चाहे पहन, फ़क़ीर सिफ़त हो और कुलाह तातारी पहन।"

आगस्तीन ने दौलतमंद और लाज़र की तशरीह करते हुए ये कहा, "ये इस का इफ़्लास (ग़रीबी) ना था बल्कि उस की दीनदारी थी जिसके बाइस लाज़र फ़िर्दोस (जन्नत) में गया और जब वहां पहुंचा तो एक दौलतमंद की गोद में उस ने आराम पाया।"

# दिल के ग़रीब

हमारे आक़ा व मौला सय्यदना मसीह ने एक क़िस्म के इफ़्लास (ग़रीबी) की तारीफ़ की, **"मुबारक हैं वो जो दिल के ग़रीब हैं क्योंकि आस्मान की बादशाहत उन्हीं की है।"** यहां ऐसे लोगों की तारीफ़ नहीं जिसके पास दुनियावी माल व मता (दौलत व सामान) क़लील (कम) हो। ना ऐसे लोगों की जो फ़क़ीरी ज़िंदगी बसर करने के लिए दुनिया को तर्क करते हैं बल्कि ऐसे लोगों की तारीफ़ है जो अपनी अख़्लाक़ी और रूहानी इफ़्लास (ग़रीबी) का इल्म रखते हैं वो मुबारक हैं क्योंकि उन की आँखें खुल गई हैं। ईलाही नूर में वो अपने तारीक दिलों को देखते हैं और जिस रूह का गुज़र ऐसी हालत में से हो वो इर्फ़ान ईलाही में ज़रूर आगे बढ़ेगी। फ़िरोतनी के बाइस दिल के ग़रीब लोग महसुस करते हैं कि अब तक उन्हों ने हक़ीक़ी इर्फ़ान और क़ुदरत की दहलीज़ से भी उबूर नहीं किया। तो भी वो ख़ुदा के फ़ज़्ल पर तकिया करते और उस की मामूरी से हासिल करते और ये यक़ीन रखते हैं कि उन के क़दम तरक़्क़ी की राह में हैं। ऐसे इफ़्लास (ग़रीबी) से ज़रूर हक़ीक़ी दौलत पैदा होती है।

मसीह ने एक दूसरे मौक़े पर ये कहा, "आस्मान की बादशाहत तुम्हारे अंदर है", इसलिए जो शख़्स दिल का ग़रीब है और अपनी तरफ़ से आँख हटा कर हुस्न ईलाही की तरफ़ निगाह लगाता है। कुछ कमज़ोर तौर से ऊपर की तरफ़ देखता और जद्दो जहद करता है, तो भी उसे इल्म है कि उस के बातिन में आस्मान की बादशाही नशव व नुमा पा रही है क्योंकि रूह-उल-क़ुद्दुस उस के अंदर सुकूनत कर रहा है।

# ख़ुद इंकारी

क्या मसीही दीन में किसी चीज़ का तर्क नहीं? है तो सही बहुत चीज़ें आदमी को तर्क करनी और छोड़नी पड़ती हैं। क्योंकि उन से बातिनी ज़िंदगी में रुकावट पैदा होती है। बहुत मसीहीयों को ये बुलाहट आती है कि ख़्वाह वो दुनिया की ऐश व इशरत को क़ुबूल करें या ख़ुद इंकारी कर के मसीह की दावत को, मसीह ने इस का तक़ाज़ा किया, बल्कि हक़ीक़ी शागिर्द के परखने का ये मेयार था। आपने फ़रमाया ! **"अगर कोई मेरे पीछे आना चाहीए तो अपनी ख़ुदी से इन्कार करे और अपनी सलीब उठाए और मेरे पीछे हो ले।"** (मत्ती 16 बाब 24 आयत) एक दूसरे मौक़े पर आप ने ये कहा, **"अगर कोई मेरे पास आए और अपने बाप और माँ और बीवी और बच्चों और भाईयों और बहनों बल्कि अपनी जान से भी दुश्मनी ना करे, तो मेरा शागिर्द नहीं हो सकता।"** (लूक़ा 14 बाब 26 आयत) आपने एक मक़ूले में इस का लुब्ब-ए-लुबाब बयान किया, **"जो कोई मेरे सबब अपनी जान खोता है उसे बचाएगा।"** (मत्ती 10 बाब 39 आयत)

बादियुन्नज़र (ज़ाहिरी सोच) में अपने अज़ीज़ों से दुश्मनी रखने का ख़्याल सख़्त मालूम होता है लेकिन सामईन (सुनने वालों) को मालूम था कि मसीह का मतलब क्या था वो समझते थे कि शागिर्दी जैसे अहम अम्र में उसे सख़्त अल्फ़ाज़ इस्तिमाल करने की ज़रूरत थी। निम् (नाम निहाद) तजावीज़ की वहां गुंजाइश ना थी। तुम या तो मसीह और उस की मुहब्बत को तर्जीह दो या अपने घर और ख़वेश और अक़्रिबा (रिश्तेदार, क़रीबी) को। ये आज़माइश हर एक के सामने यकसाँ नहीं आती। लेकिन एक ना एक वक़्त ये आती ज़रूर है और जहां सवाब या अज्र के ख़्याल के बग़ैर सर-ए-तस्लीम ख़म हुआ और तर्क के हुक्म को मान लिया गया उस का अज्र यह होगा कि वो जान फ़िल-हक़ीक़त तक्मील को पहुंचेगी और ऐसे मक़्सद की तरफ़ तरक़्क़ी करने के लिए किया ऐसा तर्क मुनासिब नहीं?

# दिल की पाकीज़गी

इस क़द्र ज़िक्र के बाद अब ये बताना ज़रूर नहीं कि तसव्वुफ़ और मसीही दीन दोनों में दिल की पाकीज़गी पर ज़ोर दिया गया है। नापाकी से दिल की आँख अंधी हो जाती है। **इमाम ग़ज़ाली ने सूफ़ियों के अक़ीदे की तारीफ़ करते हुए ये कहा, "दिल को उन सारी बातों से पाक करना जो ख़ुदा से इलाक़ा नहीं रखतीं, दिली तहारत में पहला क़दम है।"** मसीह ने

फ़रमाया, **"मुबारक हैं वो जो दिल के पाक हैं क्योंकि वो ख़ुदा को देखेंगे।"** ये दीदार यहां से शुरू होता है और आक़िबत (आख़िरत) में उसकी तक्मील होती है।

मसीह के ज़माने के दीनी पेशवाओं ने मूसवी शरीअत के मुताबिक़ बदन की शरई पाकीज़गी की ज़रूरत की ताअलीम दी। पाक और नापाक चीज़ों में बड़ा इम्तियाज़ किया। लेकिन मसीह ने ये ताअलीम दी कि इन धोए (यानी धुले हुए) हाथों से खाना खाना, यानी शरई फ़ेअल की फ़िरोगुज़ाश्त आदमी को नापाक नहीं करती ना वो शैय जो मुँह के अंदर जाती है बल्कि वो चीज़ें जो मुँह से निकलती है जिन्होंने ये कलाम सुना उन्हों ने इस का मतलब ना समझा इसलिए मसीह ने ये तशरीह की :-

**"जो बातें मुंह से निकलती हैं वो दिल से निकलती हैं और वुही आदमी को नापाक करती हैं, क्योंकि बुरे ख़्याल, ख़ूँ-रेज़ियाँ, ज़िनाकारीयाँ, हरामकारियां, चोरियां, झूटी गवाहियाँ, बद गोईआं दिल ही से निकलती हैं। यही बातें हैं जो आदमी को नापाक करती हैं मगर बग़ैर हाथ धोए खाना खाना आदमी को नापाक नहीं करता।" (मत्ती 15 बाब 18 से 19 आयत)**

मसीह ने नापाकी का जो ख़ाका खींचा वो सही है और हर एक शख़्स को दिल को पाक करने वाली क़ुव्वत की ज़रूरत है **क्योंकि दिल के पाक लोग उन बातों को देख सकते हैं जिनको नापाक लोग देख नहीं सकते** और हक़ीक़ी दीन के राज़ों से आगाह हो सकते हैं। टॉमस कैम्पस ने ये कहा, अगर तू चखना और देखना चाहता है कि ख़ुदा कैसा शीरीं है तो तुझे उर्यां (शर्मिंदा) हो कर और ख़ुदा के आगे पाक दिल हो कर आना चाहीए।

# मुनक़सिम इरादा

मुसीबत ये है, कि अक्सर लोग ख़ुदा की जानिब रख कर के जब चलने लगते हैं तो वो अपनी सारे जद्दो जहद में बेकस व लाचार महसूस करते हैं, ये उन के इरादे के सुकून का नतीजा है। उनके अंदर आरज़ू ऐसी ज़बरदस्त नहीं कि अदना आरज़ू पर ग़ालिब आ जाये पौलुस रसूल ने अपनी ज़िंदगी की एक हालत में अपने तईं रूहानी तौर पर पाबज़ंजीर (यानी मिजाज़न बेड़ियों में क़ैद) पाया और यूँ चिल्ला उठा, **"हाय मैं कैसा**

कम्बख़्त आदमी हूँ, इस मौत के बदन से मुझे कौन छुड़ाएगा?"

**आगस्तीन** जो मसीही कलीसिया में बड़ा आलिम गुज़रा है वो इसी क़िस्म के तजुर्बे से गुज़रा उस ने इस का यूं बयान किया, जब इन्सान पर गहिरी नींद तारी होती है तो अक्सर आदमी उसे दूर करने की कोशिश नहीं करता गो उसे पसंद ना करता हो, उसे आने देता है। यही हाल मेरा था, मुझे यक़ीन था, कि अपनी शहवात से मग़्लूब होने की निस्बत तेरी मुहब्बत से मग़्लूब होना बेहतर था। गो इस मोख़्ख़र-उल-ज़िक्र (बाद के ज़िक्र) का मैं क़ाइल था। तो भी अव्वल-उल-ज़िक्र (पहले का ज़िक्र) मुझे मर्ग़ूब था और मैं इस में मुब्तला रहा। तेरी दावत का जवाब देने के लिए मुझमें कुछ ना था ऐ सोने वाले जाग ! लेकिन नींद के वक़्त ये अल्फ़ाज़ निकलते रहे, ज़रा ठहरो, अभी उठता हूँ, लेकिन इस अभी का कोई अभी ना था। और ज़रा ठहरो ! एक तूल तवील ज़माना हो गया,.....क्योंकि मुझे अंदेशा था कि तू बहुत जल्द सुन लेगा और मेरी शहवत की आरज़ू का ईलाज करेगा। जिसे मैं नेस्त तो करना ना चाहता था बल्कि उस को पूरा करना चाहता था।

हिन्दुस्तान में यही तजुर्बा लोगों को हासिल हुआ। **रबिन्द्र नाथ टैगोर का बयान है, ज़ंजीरें तो बहुत सख़्त हैं, लेकिन जब मैं उन्हें तोड़ना चाहता हूँ तो दिल दुखने लगता है।....ऐ दोस्त लेकिन जो कूड़ा करकट मेरे कमरे में भरा पड़ा है मैं उस को जारोब (झाड़ू) से निकालना नहीं चाहता। जो पर्दा मुझ पर पड़ा हुआ है वो ख़ाक और मौत का है। मैं इस से घिन करता हूँ तो भी प्यार से उस से चिमटा रहता हूँ। मेरा फ़र्ज़ भारी है मेरे क़सूर बड़े हैं। मेरी शर्म पोशीदा और गिरां (गिरी हुई) है तो भी जब में अपनी भलाई के लिए अर्ज़ करने लगता हूँ, तो मेरा दिल काँपता है कि कहीं वो दरख़्वास्त मंज़ूर ना हो जाये।**

इमाम ग़ज़ाली की यही हालत हुई। जब उस के ज़मीर ने उस को हिदायत की कि किस रास्ते पर उसे चलना चाहीए। वो लिखते हैं, **सुबह को तो मैं सच्चे दिल से ये इरादा करता कि अब मैं आक़िबत (आख़िरत) की फ़िक्र में ही ज़िंदगी बसर करूंगा। और शाम को जिस्मानी ख़यालात का एक बड़ा हुजूम मुझे आ घेरता और मेरे इरादों को मुंतशिर कर देता।** ये तजुर्बा भी पौलुस के तजुर्बे के मुशाबेह था, जिसने ये लिखा, "जिस नेकी का मैं इरादा करता हूँ वो तो नहीं करता बल्कि जिससे मुझको नफ़रत है वही करता हूँ।" (रोमीयों 7 बाब 15 आयत)

# नफ़्स ग़ुलाम बनाने वाला

इस मुनक़सिम इरादे से हमको क्यों तक्लीफ़ पहुँचती है? आला की तरफ़ हमारे अंदर मीलान तो है लेकिन कोई शैय रूह को उस आला तबक़े की तरफ़ परवाज़ करने से रोकती है, जो कि उस की हयात है। उस के परों में एक बोझ बंधा है जो उसे ज़मीन की तरफ़ खींचे लिए जाता है। हक़ीक़ी नफ़्स को इस अदना नफ़्स ने ग़ुलाम बना रखा है हमारे अंदर एक अदना या शहवानी नफ़्स पाया जाता है, जो आला को दबाए रखता है। मंशा तो ये था कि आला नफ़्स सुल्तान हो और अदना उस का ग़ुलाम। लेकिन अक्सरों की ज़िंदगी में ये मुआमला बिल्कुल बरअक्स हो गया अगरचे इन्सान की आरज़ू और एहसास और एतराज़ ऐसी गुलामी के ख़िलाफ़ हैं।

मुसलमानों को बख़ूबी मालूम है कि इस तरीक़े से जकड़ बंद होने के क्या मअनी हैं। उन को इस अम्र का इल्म है कि इन्सान के बातिन में मुख़ालिफ़ अनासिर मौजूद हैं। और जो अंसर उनके बातिन में ख़लल पैदा करता और उनकी रूह को ग़ुलाम बनाता है उसे वो नफ़्स से मोसूम करते हैं। जज़्बात और शहवात का ये सदर मुक़ाम है और इस के मअनी तक़रीबन वही हैं जो मसीही इस्तिलाह में जिस्म कहलाता है, क्योंकि इंजील में लफ़्ज़ जिस्म से वो अदना ज़ात मुराद है जो इरादे को बदी (बुराई, गुनाह) की तरफ़ माइल करती है।

जिस क़द्र इस नफ़्स की हुकूमत कम व बेश होती है उसी क़द्र ख़ुदा और इन्सानी रूह में जुदाई कम व बेश (कम और ज़्यादा) होती है। मुहम्मद साहब का क़ौल है, तेरा सबसे बड़ा दुश्मन तेरा नफ़्स है और अक्सर मुसलमान इस क़ौल पर साद करेंगे। तम्सीलन इस को लोमड़ी और साँप से तश्बीह दी गई है। अल हल्लाज कहा करते थे कि, बाज़ औक़ात उन का नफ़्स कुत्ते की तरह उनके पीछे पीछे चलता है। सारे सूफ़ियों का ये ख़्याल है, कि ये नफ़्स एक अदना, रेंगने वाली और आलूदा करने वाली ज़ात है जो रूह को ग़ुलाम बनाती और इस के नशव व नुमा (तरक्क़ी) को रोक देती है। अंग्रेज़ शायर ने इसी मज़्मून को कुछ यूं बयान किया था :-

अब ऐसा मालूम होता है, कि किसी ग़ैर मुरई (यानी दिखाई ना देने वाले) देव ने अपने क़वी (ताक़तवर) और नापाक हाथ मेरे इरादे पर डाले हैं और मुझे खींच कर अपनी तरफ़ ले जा रहा है और मेरी हस्ती की ख़ुशहाली को लूट कर ले जा रहा है।

पस दिल तक दो अतराफ़ से या दो फाटकों के ज़रीये पहुंच सकते हैं। "जिस्म" के ज़रीये और "रूह" के ज़रीये, या बक़ौल रूमी :-

एक ये दुनिया है और एक वो दुनिया है।
और मैं दहलीज़ पर बैठा हूँ।
क्या मैं हैवानियत की तरफ़ झुकूं या ख़ुदा की तरफ़? इस सवाल का जवाब हम सबने देना है।

एक दफ़ाअ मुहम्मद साहब बाअज़ क़बीलों के साथ जंग कर के वापिस आ रहे थे तो उन्होंने फ़रमाया कि जिहाद नफ़्स जिहाद अकबर था। उन्हों ने ये महसूस किया कि इन्सान बज़ात-ए-ख़ुद उस ख़ुशी तक पहुंच नहीं सकता जो इन्सानी रूह में ख़ुदा के सुकूनत करने से हासिल होती है।

हम नाज़रीन से बमंत् अर्ज़ करते हैं कि इस के मुताल्लिक़ जो कुछ इंजील में बयान हुआ है उस को ग़ौर से पढ़ें। इस में ऐसे लोगों का बयान बकस्रत हुआ है जो मसीह और रूह-उल-क़ुद्दुस की तासीर से मोअस्सर होते हैं। इस की चंद मिसालें पेश करना मुनासिब होगा। इस में ज़िक्र है कि इन्सान के बातिन में एक पुराना मख़्लूक़ है और एक नया मख़्लूक़ है, एक जिस्मानी इन्सान है और एक रूहानी। और ये तशबहीं मसीही दीन की जान हैं। जैसा हमने माक़बल बाब में ज़िक्र किया इन्सान अपनी तिब्बी हालत में अपने अंदर अख़्लाक़ी तब्दीली ख़ुद बख़ुद पैदा कर नहीं सकता। जिससे कि उस की रूह को नई ज़िंदगी और ख़ुदा के साथ मुस्तक़िल शराकत (सेहत मंद रिश्ता व रिफाक़त) हासिल हो।

तौबा और तब्दीली दिल मसीही दीन में लाज़िमी उमूर हैं, लेकिन इनके साथ साथ तौफ़ीक़ ईलाही की ज़रूरत है। ख़ुदा का रूह-उल-क़ुद्दुस इन्सान के दिल को अज़ सर-ए-नौ (नए सिरे से) पैदा करता है और इस से नई ज़िंदगी और रूहानी तब्दीली हासिल होती है। इसलिए ये ना सिर्फ वाहिद हक़ीक़ी दीन है, बल्कि दीन की तारीख़ में लासानी दीन है।

तसव्वुफ़ की किताबों में इस के लगभग एक मशहूर मुसलमान सूफ़ी औरत का क़िस्सा आता है, इस औरत का नाम रबीया अल-अदवीयह था जो 750 हिज्री में ज़िंदा थी। **एक दफ़ाअ किसी ने उस से ये पूछा कि अगर मैं ताइब हो कर (यानी तौबा करके) ख़ुदा की तरफ़ फिरूँ तो क्या रहम से वो मेरी तरफ़ फिरेगा? उस ने जवाब दिया, नहीं, बल्कि अगर वो तेरी तरफ़ फिरेगा तो तू उस की तरफ़ फिरेगा।**

इन्सान और ख़ुदावंद दोनों को कुछ करना पड़ता है, जब बेदार शूदा और ताइब रूह (तौबा करने वाली रूह) के पास रूह-उल-क़ुद्दुस आता है तो एक नया आग़ाज़, एक नया मख़्लूक़, एक नई नीयत, इन्सान के अंदर पैदा हो जाती है जो उसे ख़ुदा के साथ एक नया रिश्ता और शराकत (रीफाक़त) रखने के क़ाबिल कर देता है।

रूह-उल-क़ुद्दुस किस सूरत में आता है? बाज़ औक़ात ख़ुदा के सांस के तौर पर, क्योंकि जब मसीह ने इन्सान की रूह के अंदर नई पैदाइश पैदा करने के लिए रूह-उल-क़ुद्दुस के फ़ेअल का ज़िक्र किया, तो आपने ये फ़रमाया, **"हवा जिधर चाहती है चलती है, और तू उस की आवाज़ सुनता है मगर नहीं जानता कि वो कहाँ से आती और कहाँ को जाती है जो कोई रूह से पैदा हुआ ऐसा ही है।"** (युहन्ना 3 बाब 8 आयत)

एक दूसरा अम्र जो मसीही तजुर्बे में लासानी (अनोखा) है वो ये है, नई ज़िंदगी के मुताल्लिक़ इंजील में साफ़ बयान है कि नौ (नई) पैदा शूदा रूह गुनाहों की माफ़ी और उस के साथ इत्मीनान का एहसास भी बहुत होता है। एक मिसाल लीजिए, "किसी बच्चे ने अपनी वालिदा की ना-फ़रमानी की जिसकी वजह से उस को सख़्त रंज पैदा हुआ वो अपने गुनाह को महसूस कर के उस का इक़रार करता है, लेकिन वो अपनी माँ की गोद में फिर कैसे जा सकता है, जब तक उसे ये महसूस ना हो कि उस की वालिदा ने उसे माफ़ कर दिया है? इस के और उस की वालिदा के दर्मियान इत्तिहाद कैसे हो सकता है? जब तक कि बच्चा अपनी माँ के मुहब्बत भरे तबस्सुम (मुस्कराहट) को देख ना ले?"

इंजील की ये ताअलीम है कि ख़ुदा मसीह में दुनिया को अपने साथ मिला रहा था और हर बेदार शूदा रूह जो इस सदाक़त पर ईमान लाती और मसीह को क़ुबूल करती है उसे ये ख़ुश तयक़्क़ुन हासिल होता है कि मसीह की ख़ातिर ख़ुदा ने उसे माफ़ कर दिया है। इस बातिनी तरीक़े में मसीही शख़्स यूँ क़दम उठाता है, ख़ुदा की माफ़ी का ये तजुर्बा रूह को हासिल होता है और पाकीज़गी और तक़्दीस की तासीर को वो महसूस करने लगता है।

ये दावत है कि इन्सान तारीकी में से निकल कर ख़ुदा के अजीब नूर में आए। इस के ज़रीये से रूह और ख़ुदा के दर्मियान सही रिश्ता क़ायम होता है जिसके ज़रीये से ख़ुदा का हमारे अंदर बसना मुम्किन हो जाता है।

# चौथा बाब

## कमाल की तरफ़ तरक़्क़ी

जब तक हम ये ना जान लें कि सूफ़ी की मंज़िल-ए-मक़्सूद क्या है, तब तक उन के तरीक़े की ठीक समझ हमको मिल नहीं सकती। प्रोफ़ैसर निकल्सन साहब लिखते हैं, "सारे तसव्वुफ़ का दारोमदार इस अक़ीदे पर है कि जब इन्सान की अपनी फ़रदियत और ख़ुदी मादूम (ख़त्म) हो जाती है तब वो आलमगीर रूह मिलती है या दीनी इबारत में यूँ कहें कि वज्द ही एक ऐसा वसीला है जिसके ज़रीये से रूह ख़ुदा के साथ बराह-ए-रस्त मेल-जोल व इत्तिहाद हासिल कर सकती है। रियाज़त, तहारत, मुहब्बत, इर्फ़ान तक़द्दुस जो तसव्वुफ़ के बड़े उसूल हैं उनकी नशव व नुमा (तरक्क़ी) इसी उसूल से शुरू होती है।

मुतवातिर सई (लगातार मेहनत) ये होनी चाहीए कि ये फ़र्दियत और ख़ुदी मादूम (ख़त्म) होती जाये। क्योंकि इसी के मादूम (ख़त्म) होने से कामिल हक़ीक़ी रूह की पहचान हासिल हो सकती है। ब्रहमन उप्रषिदों की ताअलीम के ये ऐन मुताबिक़ है।

जब तक दुई क़ायम रहती है ईलाही वहदत नाकामिल रहती है। यही हमा औसत की ताअलीम है।

तौहीद की ये नई तशरीह है, ये तौहीद सदीयों से मुसलमानों का अक़ीदा रहा है। सूफ़ी शख़्स के नज़्दीक वहदत के ये मअनी हैं कि इन्सान फ़नाफ़िल्लाह हो जाये। और ये कलिमा ला इलाहा (لا اللہ الا اللہ) बदल कर ला इल्लल्लाह (لا ۔ الا اللہ) रह जाता है। या जैसा किसी सूफ़ी ने कहा :-

جناب حضرت حق را دوئی نیست

دراں حضرت من و ماتوئی نیست

من وما وتو واو ہست یک چیز

کہ درو حدت نباشد، ہیچ تمیز

अब ये सवाल पैदा होता है, कि वो वाहिद क्यों कस्रत बन जाये। ये हिंदू मसअला है। सूफ़ी इस का ये जवाब देते हैं कि तामा (लालची) मुसन्निफ़ की तरह जो ये चाहता है कि उस की तबाअ ज़ाद ख़यालात उस की किताब के ज़रीये दूसरों को मालूम हो जाएं ऐसा ही इस आला अक़्ल की ये आरज़ू थी कि ऐसे वजूद पैदा करे जिनमें वो अपनी हमादानी डाल सके। कभी इस ख़्याल को इन लफ़्ज़ों में ज़ाहिर किया जाता है "इस महबूब ने शीशे में अपने हुस्न को देखकर ये आरज़ू की कि बहुत से शीशे पैदा हो जाएं जिनमें उस हुस्न का अक्स ज़ाहिर हो।"

वो लोग ये कहते हैं कि इन्सानी रूह अब तारीकी और मुंतशिर नूर के हज़ारहा हिजाबों (पर्दों) में लिपटी पड़ी है। ये हिजाब उसे हक़ीक़त से अलायहदा (अलग) किए हुए हैं। ये हिजाब (पर्दे) भी ख़ुद ख़ुदा ने ही पैदा किए हैं।

सूफ़ी तस्नीफ़ात में इस का बहुत ज़िक्र आता है कि इन्सान में रूह उस हक़ीक़ी ज़िंदगी से अलैहदा (अलग) हो कर आतिश-ए-हिज्र में तड़प रही है। इसी ने मिसाल दी, "इन्सान की रूह उस तने की मानिंद है जिसे किसी ने उस की जगह से काट लिया और उस की बाँसुरी बना ली अब इस बाँसुरी की दर्द-नाक आवाज़ आँखों से आँसू बहा रही है। अहले तसव्वुफ़ कहते हैं कि जब बच्चा रोता हुआ पैदा होता है, तो इस की यही वजह है कि रूह ख़ुदा से अपनी जुदाई को महसूस कर रही है और जब जो ख्वाब में बच्चा चिल्लाता है तो वो ये महसूस करता है कि मैं राह भूल कर अपने असली वतन से दूर जा पड़ा हूँ। बादअज़ां जब वो दुनियावी उमूर में महव (गुम) हो जाता है तो जुदाई का ये एहसास जाता रहता है। इसलिए इस को अज़ सर-ए-नौ (नए सिरे से) बेदार करने की ज़रूरत पड़ती है।"

जो हिजाब (पर्दा) सूफ़ी को हक़ से जुदा किए हुए हैं, उन को कैसे दूर करें? किसी हिंदू योगी या मसीही राहिब ने इस आला रुयते (नज़ारे) के हासिल करने के लिए अपने तईं ऐसे दुख नहीं दीए जैसे कि सूफ़ियों ने दीए हैं। दर्द और शर्म को उन्होंने हक़ीर जाना और **बुद्ध** की तरह वो ये कहने लगे :-

सारी ख़ुशहाली की ख़ुशहाली और सारी ख़ुर्मी की ख़ुर्मी इस दरोग़ (झूठ) को तर्क करना है जो ये कहता है कि मैं हूँ।

# अल्लाह का नाम

जुदाई और तारीकी के हिजाबों (पर्दों) को दूर करने का बड़ा तरीक़ा अल्लाह के नाम का ज़िक्र है। डाक्टर इमाद-उद्दीन ने जो इस्लामी उलूम के आलिम जय्यद और क़ुतुब जमाल वली और फ़ारस के शाही ख़ानदान से थे और जिन्होंने मसीही हो कर पंजाब में वाअज़ व नसीहत और तस्नीफ़ व तालीफ़ में ज़िंदगी का बड़ा हिस्सा गुज़ारा अपने मसीही होने से पेशतर का हाल बयान करते वक़्त ये ज़ाहिर किया कि सदाक़त की तलाश में उन को एक किताब बहुत अज़ीज़ थी, इस में सूफ़ी ताअलीम की हिदायात थीं। जहां कहीं वो जाते इस किताब को अपने साथ रखते और इस की ताअलीम पर चलने की हत्त-उल-वुसा (जहां तक बन पड़े) कोशिश करते। इस किताब के बारे में उन्हों ने ये तहरीर किया :-

**मैं क़ुरआन से भी ज़्यादा इस किताब को प्यारा जानता था। यहां तक कि सफ़र में रात को साथ लेकर सोता। और जब मेरी तबईत घबराती तो इस किताब को छाती से लगा कर दिल को आराम देता मैंने उस की बताई हुई सारी रसूम पर अमल किया। वो ये हैं कि बे-सिला कपड़ा पहन कर बारह दिन तक बा-वज़ू एक ज़ानू एक नशिस्त पर नहर जारी के किनारे बैठ कर बाआवाज़ बुलंद तीस बार हर रोज़ पढ़े दुनिया की कोई चीज़ ना खाए, नमक का खाना भी ना खाए। सिर्फ जो का आटा हलाल की कमाई का ला कर अपने हाथ से रोटी पकाए, लकड़ी भी ख़ुद जंगल से लाए। जूता भी ना पहने, ब्रहना पा (नंगे पाओं) रहे, इस के साथ रोज़ा रखे, दिन से पहले दरिया में ग़ुस्ल भी करे। किसी आदमी को ना छूए बल्कि वक़्त मुईना के सिवा किसी से बात भी ना करे। नतीजा उस का ये है कि ख़ुदा से वस्ल हो जाता है। इसी लालच में बन्दे ने ये दुख उठाया। इस के सिवा लाख दफ़ाअ लफ़्ज़ अल्लाह भी इसी हाल में काग़ज़ पर लिखा। एक जुज़्व काग़ज़ हर रोज़ लिख डालता था। बल्कि मक़रूज़ से हर लफ़्ज़ अलायहदा अलायहदा (अलग-अलग) कुतर के आटे की**

**गोलीयों में लपेट कर दरिया की मछलीयों को खिलाता था। ये अमल भी इसी किताब में लिखा था। दिन-भर ये काम करता रात को निस्फ़ शब (ज़्यादा रात में) सोता। निस्फ़ शब (गहरी रात में) बैठ कर लफ़्ज़ अल्लाह ख़्याल के अंदर दिल पर लिख कर ख़्याल की आँख से देखा करता इस मशक़्क़त के बाद जब वहां से उठा तो मेरे बदन में ताक़त ना रही, रंग ज़र्द हो गया, मैं हवा के सदमे से अपने तईं थाम नहीं सकता था।**

एक रास्त रूह के तजुर्बे के बयान से किस क़द्र समझ सकते हैं कि अल्लाह का ज़िक्र करने में कैसी जद्दो जहद दरकार है। कहते हैं कि इस से दिल पाक और हसीन हो जाता है इस की आवाज़ रूह का राग है। अहले इस्लाम हर जगह इस नाम का तलफ़्फ़ुज़ ऐसे तरीक़े से करते हैं, ताकि ख़ुदा का दीदार बहुत जल्द उन को हासिल हो जाये।

हम ये मान लेते हैं कि अज़्म जज़्म (इस तरफ इरादे) के ज़रीये या किसी जुम्ला या नाम के तोते की तरह रटने के ज़रीये बाअज़ गुनाहों से आदमी बच जाये। लेकिन ये तो बिल्कुल नामुम्किन है कि ऐसे तरीक़े से इन्सान ऐसे आला दर्जे को पहुंच जाये जिससे कि उस की मर्ज़ी और ख़ुदा की मर्ज़ी एक हो जाये। हम ये मानने को तैयार हैं कि ऐसे तकरार अल्फ़ाज़ या ज़िक्र के ज़रीये ये सूफ़ी मक़्सद हासिल हो जाये कि वो अपने आपको भूल जाये, लेकिन ख़ुदा का ये मंशा नहीं।

## हालत वज्द

अल्लाह के नाम के ज़िक्र में मदद करने के लिए मुसलमान सूफ़ी एक मुनाजात भी इस्तिमाल किया करते हैं, इस का उन में ज़िक्र है। इस में खासतौर पर हर सांस लिया जाता और ख़ास बदनी हरकात पर अमल किया जाता है। दीनी मजलिसों में इस पर अमल करते हैं। जिनमें एक या ज़्यादा अश्ख़ास इस नाम के ज़िक्र की वाहिद कोशिश में महव (मदहोश, गुम) होते हैं। ये ज़िक्र ख़फ़ी भी होता है और जली भी लेकिन इस की शर्त ये है कि इन्सान के दिल में ख़ुदा के ख़्याल के सिवा और कोई ना रहे। सूफ़ी ताअलीम में अगर कोई अमली बात है तो यही ज़िक्र है।

जब आदमी बतदरीज हुरूफ़ अल्फ़ाज़ और जुमले बिल्कुल भूल कर एक ही ख़्याल हासिल कर लेता है तो उसे वो तरक़्क़ी कहते हैं। दीगर अल्फ़ाज़ में रूह की तब्दीली सिर्फ उस वक़्त होती है जब जो इस ज़ाहिरी के तसव्वुर से हवास-ए-बातिनी को हासिल करता है। हम सब जानते हैं कि किसी शैय में ऐसा महव (गुम या मदहोश) होना मुम्किन है कि किसी शैय के हासिल करने में बातिनी अमल बिल्कुल फ़रामोश हो जाये। लेकिन इस नाम के ज़रीये क्या वो तसव्वुर या मक़्सद हासिल होता है? सूफ़ी क्या हासिल करना चाहता है?

मौलाना रूमी की तरह हम पूछते हैं।

क्या कोई नाम अपने मोज़ूअ के बग़ैर हुआ करता है? क्या तुमने कभी गमले से फूल तोड़े?

तुम उस का नाम लेते हो। उस हक़ीक़त को जा कर ढूंढो जिसका ये नाम है।[3]

ये तो आश्कारा (ज़ाहिर) है, कि अक्सर सूफ़ियों का मक़्सद और गाइत (वजह) ये है, कि दिलसादा लौह की तरह हो, ताकि उस में वज्द की हालत पैदा हो सके और फिर उस गाइत (वजह) हालत में मुंतक़िल हो सके। जिसमें कि इन्सानी रूह फ़नाफिल्लाह हो जाती है। और वज्द के ज़रीये ये हालत पैदा हो सकती है। मुहब्बत, इर्फ़ान, तवक्कुल अलल्लाह की मंज़िलें हैं। लेकिन वो सब इस वज्द या हालत का जुज़ (हिस्सा) हैं जिसमें इरादा और अक़्ल नेस्त (ख़त्म) होते जाते हैं। एहसास ही एहसास बाक़ी रहता है। रक़्स के चक्कर और काफ़ियों का सुरीलापन बाज़ औक़ात जाम-ए-शराब इस हालत को पैदा करने में मदद करते हैं और इस का नाम रूहानी ख़ुशी रखा जाता है।

बहुत मुसलमानों को अब ये मालूम होता जाता है। कि रक़्स व सुरों की ये रियाज़तें (मशक्कतें) उन के आमिलों के लिए मुज़िर (नुक्सानदायक) हैं। प्रोफ़ैसर मेक्डानल्ड साहब लिखते हैं कि, "एक दफ़ाअ जब वो क़ाहिरा में थे तो उस ने एक दोस्त से सुना जो साहब मतबाअ (छापने वाले) थे कि उन्हें अपने दो कम्पाज़ टियरों को मौक़ूफ़ करना पड़ा क्योंकि वो अपने काम के लिए बिल्कुल नाक़ाबिल हो गए थे। चुनान्चे उस ने बयान किया कि वो हफ़्ते में दो दफ़ाअ उन ज़िक्रों के लिए जाते और उस का ये नतीजा था, कि इन दिनों में वो जिस हर्फ़ को जोड़ ने बैठते तो सारा दिन वही दीनी जुमले

---

3 जलाल उद्दीन रूमी जिल्द अव्वल हिकायत 14

उन की ज़बान से निकलते रहते और यूं उन के काम में हर्ज वाक़ेअ होता। अस्ल बात ये थी कि वो एक मक़नातीसी (अपनी तरफ खिंच लेने वाली) हालत ख़्वाब पैदा करना चाहते थे। हालत बज़ात-ए-ख़ुद तो हज़ (लुत्फ़) की हालत थी लेकिन वो हालत वैसी ख़राब थी जैसे कि एफियों वग़ैरह के निशा से इन्सान काहिल-उल-वुजूद हो जाये। उन को ये ख़्वाब जैसा तो हासिल हो गया और वो सारा दिन इसी मक़नातीसी (अपनी तरफ खिंच लेने वाली) बेहोशी में पड़े रहते।

**इंजील में लिखा है कि "शराब पी के मतवाले ना हो बल्कि रूह से भर जाओ।"** (इफ़िसियों 5 बाब 18 आयत) इस का मतलब ये है कि बदनी फ़ित्रत के बाअज़ एहसास के ज़रीये नशा हासिल करने की तलाश ना करो ना किसी ज़हरीली शैय से जिससे कि आसाब पर आरिज़ी असर हो, बल्कि हक़ीक़ी चश्मे से इल्हाम, क़ुव्वत और तक़्दीस (पाकीज़गी) की तलाश करो। यानी ख़ुदा के रूह-उल-क़ुद्दुस से जो दिल में आकर सदाक़त और मुहब्बत का फ़र्हत (ख़ुशी, साद्मानी) बख्श नूर बख़्शता है।

## जज़्बाती तसव्वुर

सूफ़ियों और दरवेशों की ये हालत वज्द कभी कभी अजीब सूरत इख़्तियार कर लेती है और इस वहदत की तरफ़ तरक़्क़ी करने के लिए अजीब मिसालें और तश्बीहें इस्तिमाल करती है। इर्फ़ान और इश्क़ के दो मसअलों की तशरीह जिनका इत्तिहाद मार्फ़त में पाता जाता है। इश्क़-ए-मजाज़ी और शराब-ख़ाना की मिसालों से की जाती है। सूफ़ी किताबों में इश्क़ के किस्से कहानियां भरे पड़े हैं और बड़े मुबालग़े से उनका बयान हुआ है। ज़ुलेख़ा और यूसुफ़ की बाहमी मुहब्बत को रूह के इश्क़ ईलाही की तम्सील ठहराया है।

प्रोफ़ैसर निकल्सन साहब लिखते हैं, माअबसूक़ के गुल रुख़्सार की ईलाही ज़ात की मिसाल है जो अपनी सिफ़ात में मुन्कशिफ़ (ज़ाहिर) होती है। उस की स्याह ज़ुल्फ़ें इस बात का निशान हैं कि वो वाहिद कस्रत के पर्दों में छिपा है। जब उस ने ये कहा कि **"मेय (शराब) पी ताकि वो तुझे अपने आपसे मख़लिसी (छुटकारा) दे।"** तो इस के ये मअनी हैं के ईलाही मुराक़बा में महव (गुम) हो कर अपने आपको भूल जा। ये इश्क़िया और शराबखोरी वग़ैरह के इशारे इस्लामी नज़्म ही का ख़ास्सा नहीं लेकिन जिस क़द्र मुबालग़े से इस्लाम ने इनका बयान किया और किसी जगह पाया नहीं जाता।

वज्द की जिस हालत से सूफ़ी कमाल की तरफ़ तरक़्क़ी करता है, उस को परखने से ये वाहिद नतीजा पैदा होता है, कि जब इन्सान को ऐसी आला शख़्सीयत से मदद ना मिले और ना और कोई ज़रीया हासिल हो, तो वो मुहब्बत के अक़्ली नस्ब-उल-ऐन (मक़्सद) ही की तलाश करता है। ये एक जज़्बाती नस्ब-उल-ऐन (मक़्सद) है। और वो नशव व नुमा पा कर उस के लिए ये मुम्किन कर देता है कि ऐसी बातिनी हालत को हासिल करे जिसमें उस को अबदी ख़ुशहाली का हज़ (लुत्फ़) उठाने की तवक़्क़ो है। मुहब्बत का जो मसीही रूहानी नस्ब-उल-ऐन (मक़्सद) है उस से ये मुतफ़र्रिक़ है। ये मसीही नस्ब-उल-ऐन (मक़्सद) हमेशा इन्सानी रिश्तों के ज़रीये ज़ाहिर किया जाता है और उस वाहिद के साथ शख़्सी रिफ़ाक़त व शराकत ही में उस का तजुर्बा कर सकता है जो बाप दोस्त और रफ़ीक़ है।

मुसलमान सूफ़ी इस हालत वज्द में जिस क़द्र ज़्यादा तरक़्क़ी करता है उसी क़द्र ज़्यादा इल्म-ए-इलाहीयात के मसले मसाइल से आज़ाद होता जाता है। और अख़्लाक़ी तसव्वुरात की इताअत से आज़ाद मुस्तग़ना (बेपरवाह) और अक़्ल-ए-सलीम की हिदायात से लापरवाह होता जाता है। क्योंकि फ़र्दियत बतदरीज काफ़ूर (गायब) होती जाती है। गो बदन हसब इमामो लाम खाता पीता है वो फ़र्दियत बतदरीज फ़ना की हालत तक पहुंच जाती है। इस हालत में रूह नजात हासिल करती है। और इस तरीक़े का भी कमाल है। इस का रिश्ता बक़ा से हो जाता है। और वो महवियत (ख्यालों में गुम होने) की हालत है। और जिसे इमाम ग़ज़ाली साहब ने ख़ुदा में मज्ज़ूब (मस्त, मलंग) हो जाना कहा।

पस इस सफ़र का अंजाम **"इस सादा अमल का कमाल है जिसके ज़रीये रूह बतदरीज हर मुग़ाइर अश्या या गैर ख़ुदा से अलैहदा होती है।.....यानी रबूबियत के दर्जे तक जा पहुँचती है।"**

# रूहानी ख़ुदकुशी

नाज़रीन रिसाला हाज़ा को कई दफ़ाअ ये ख़्याल आया होगा कि इस तसव्वुफ़ की ताअलीम में बहुत सारी ख़तरनाक गल्तीयां हैं। मसलन अगर हम इस वाहिद नूर के शरारे हैं, तो हम में क़सूरदारी का एहसास क्यों पाया जाता है? हम बयान कर चुके हैं कि सालिक की पहली मंज़िलों में गुनाह और तौबा के एहसास पर बहुत ज़ोर दिया गया। नफ़्स कैसा घिनौना ज़ाहिर किया गया और आदमी में मुनक़सिम (बटे हुवे) इरादे या दो दिली का

बार-ए-गराँ का एहसास पाया गया। ऐसे ख़यालात इस ताअलीम से कैसे मुताबिक़त रख सकते हैं कि सिर्फ वही मौजूद है और बाक़ी सब कुछ ग़ैर वजूद है? क्या दुनिया का गुनाह उस के ज़िम्मे लगा या जाये?

सूफ़ियों को ये मुश्किल पेश आई और उनको ये कहने के सिवा चारा ना रहा कि बदी भी ख़ुदा का जुज़ (हिस्सा) थी। उन के शायर और फिलासफर ऐसा कहने से ज़रा नहीं शर्माते और इस में ख़ुदा की शान पर कैसा बट्टा लगाया जाता है।

मौलाना रूमी फ़रमाते हैं :-

**जैसा तू कहता है वो बदी का चशमा है। तो भी बदी उसे नुक़्सान नहीं पहुंचाती। बदी बनाने ही में उस का कमाल ज़ाहिर होता है।....अगर वो बदी पैदा ना कर सकता, तो उस में हिक्मत की कमी ज़ाहिर होती।**

**इसलिए वो काफ़िर बनाता है और मोमिन मुसलमान ताकि दोनों उस पर शहादत (गवाही) दें और उस वाहिद क़ादिर-ए-मुतलक़ ख़ुदा की परस्तिश करें। (दफ़्तर दोम हिकायत 10)**

**जब मौलाना साहब से किसी ने पूछा कि जिस ख़ुदा ने बदी पैदा की तो वो ख़ुद भी बद होगा। तो उन्हों ने जवाब दिया कि अगर तस्वीर में बद-सूरती पाई जाये तो वो मुसव्विर की बद-सूरती पर दाल ना होगी।** तसव्वुफ़ में ऐसी ही ताअलीम पाई जाती है। जिससे ख़ालिक़ की कसर-ए-शान (शान में कमी) होती है और उस को हमसे भी ज़्यादा ज़ईफ़ (कमज़ोर) ठहराती है। बहर-ए-हाल सब कुछ इस पर मुन्हसिर रखता है कि हम ख़ुदा की निस्बत क्या ख़्याल रखते हैं। इस सब का नतीजा ये होगा कि हमारे अंदर ज़िम्मेदारी का एहसास घट जाएगा। ख़ुदा की सीरत को मौहूम और मुबहम (यानी ख्याली, और छिपी हुई) बना दो। और ये कह कर इन्सान की ज़िम्मेदारी को घटा दो कि वो तो ख़ुद ख़ुदा ही है। उसी वक़्त सारे अख़्लाक़ का क़ला व कम्आ (बर्बाद) हो जाएगा। सदाक़त शख़्सीयत और बक़ा की दीवार मुन्हदिम हो जाएगी। (यानी गिर जाएगी), ऐसी ताअलीम से अबतरी (बर्बादी) और बदी के सिवा और क्या पैदा हो सकता है।

इमाम ग़ज़ाली ने अपनी एक किताब में ये बयान किया कि उन दिनों में भी सूफ़ी ताअलीम बाज़ों के लिए कैसी मुज़िर (नुक़्सान वाली) थी। उन्हों ने इस अम्र पर अफ़्सोस ज़ाहिर किया कि बहुत लोग ख़ुदा के इश्क़ और उस के वस्ल (मिलाप) का तो बहुत ज़िक्र करते। लेकिन अपने फ़राइज़ से ग़ाफ़िल

(दूर) रहते थे। अलहलाज को अना लहक़ (انا لحق) कहने के बाइस दार पर खींचा। हालाँकि बायज़ीद बस्तामी अलहम्दु लिल्लाह (الحمد اللہ) की जगह अलहम्दनी (الحمدنی) कहा करते थे और उनका ये तकयाकलाम था। लैय्स फी जुब्बती सवा अल्लाह (لَیس فِی جُبّتِی سَوا اللہ) (यानी) **"मेरे जुब्बे के अंदर सिवाए ख़ुदा के कुछ नहीं।"** दूसरों की भी यही आदत थी। इसलिए इमाम ग़ज़ाली ने ये दरख़्वास्त की कि इस क़िस्म के ख़्याली पुलाव अवामुन्नास (लोगो) के लिए निहायत ही मुज़िर (नुक़्सान वाली) हैं। और बहुत अहले हिर्फ़ा (पेशावर, कारीगर) लोगों ने अपने पेशे (काम) छोड़ दीए और इस क़िस्म के जुमले अपनी ज़बान से निकालने लगे। इस क़िस्म के जुमले लोगों को बहुत दिल पसंद थे। क्योंकि इस से लोगों को ये उम्मीद हो जाती है कि अपने काम छोड़कर वज्द व रक़्स के ज़रीये अपनी रूहों को पाक कर लेंगे। अवामुन्नास (लोग) भी ऐसी बातों में अपना हक़ जताते और इसी क़िस्म के परेशान ख़यालात ज़ाहिर करते हैं।

ऐसे हमा ओसती (वह्दतुल वजूद के) ख़यालात से बाम मार्गी ताअलीम पैदा होती है। कोई यूं कह सकता है कि मेरी हस्ती तो आरिज़ी है और बहुत जल्द वहदत में ग़र्क़ हो जाएगी फिर मैं नेकी, ख़ुदा, और अपने हम-जिन्सों (रिश्तेदारों, करीबियों) के लिए अपने तईं क्यों दुख दूं? खा पी और ख़ुश हो क्योंकि तेरे दिन तो गुज़रने वाले हैं।

उमर ख़य्याम ने यही कहा था :-

जो कुछ हम सर्फ़ (खर्च) कर सकते हैं सर्फ़ (खर्च) करें<br>
क़ब्लअज़ीं (इससे पहले) कि हम ख़ाक में मिल जाएं<br>
ख़ाक में ख़ाक जा मिले और हम ख़ाक में मिल जाएं<br>
मेय (शराब), ग़ज़ल, मुत्रिब (दिल ख़ुश करने वाले) के साथ ज़िंदगी ख़त्म करें।

सूफ़ी कोशिश के अंजाम तक हम पहुंच गए। इन्सानी फ़र्दियत ख़ुदा की हस्ती में जज़्ब हो गई। जैसे बादल आफ़्ताब की दरख़शानी में ग़ायब हो जाता है। अल-अर्ज़ सूफ़ी कमाल ख़्याल, और शख़्सीयत की नफ़ी है। मसीही दीन की ताअलीम इस के बर-ख़िलाफ़ है। **मसीही दीन में अक़ीदा कुल शख़्सियत यानी अक़्ल, दिल और इरादे से इलाक़ा रखता है। इस में "मैं" और "तू" का अदम नहीं होता बल्कि इन दोनों का कामिल इत्तिहाद हो जाता है।** ये नफ़्स का फ़रामोश करना नहीं बल्कि मुहब्बत में उस का इज़्हार है। रास्तबाज़ी पर ज़ोर है ना महज़ तर्क (दुनिया छोड़ने) पर ख़ुदा वाहिद

है, लेकिन वो कस्रत को मादूम (ख़त्म) नहीं करता। बल्कि वो कस्रत में सुकूनत करता और इस कस्रत में जो मुतफ़र्रिक़ दिल और इरादे पाए जाते हैं उन को ज़ेवर हुस्न से आरास्ता पैरास्ता करता है। उस की ज़िंदगी से हर ज़िंदगी को हरकत है। लेकिन एक ख़ास मअनी में वो ऐसी ज़िंदगी में मोवजज़िन होती है जिसने यसूअ को अपना ईलाही नजातदिहंदा तस्लीम कर लिया। और वो ज़िंदगी को ऐसी अख़्लाक़ी क़ुव्वत और रूहानी सीरत से मुज़य्यन करती है कि रूह इन्सानी अपने तईं दूसरी रूहों से अलेहदा (अलग) नहीं कर सकती बल्कि जोश व ख़ुर्रमी के साथ दूसरों तक पहुँचती है और ख़ुदा की मुहब्बत को ज़ाहिर करती है।

हमारे आक़ा व मौला सय्यदना मसीह ने ये फ़रमाया, **तुम मुझमें क़ायम रहो तुम मेरी मुहब्बत में क़ायम रहो।** इसी मौक़े पर उस ने ये भी फ़रमाया, **"जैसी मैंने तुमसे मुहब्बत रखी तुम भी एक दूसरे से मुहब्बत रखो।"** ये दोनों तसव्वुर लाज़िम मल्ज़ूम हैं। यही मुहब्बत शख़्सीयत का कमाल और मसीही अक़ीदे का लुब्ब-ए-लुबाब (खुलासा) है। हमारे अंदर जिस क़द्र गहरा एहसास इस मुहब्बत का होगा उसी क़द्र ज़्यादा हमारे अमल में इस का इज़्हार होगा।

अल-ग़र्ज़ मसीही शख़्स में इन सूफ़ी तजुर्बात का एक अख़्लाक़ी मक़्सद है जिससे वो ख़ुदा का हक़ और इन्सान का हक़ बजा लाने के क़ाबिल हो जाता है। चूँकि ख़ुदा ने हमको इन्सानी सोसाइटी में रखा है। इसलिए बहैसियत बाप, ख़ावंद, शहरी और मैंबर सोसाइटी अपना फ़र्ज़ अदा कर के आदमीयों के दर्मियान ख़ुदा की सल्तनत और ख़ुदा के शहर की तामीर करें।

# पांचवां बाब

## कामिल रुहानी रहनुमा

अहले तसव्वुफ़ में इस अम्र पर अक्सर बहस रही कि ख़ुदा के साथ इत्तिहाद पैदा करने का कोई वसीला भी है। बाज़ों के नज़्दीक तो ये ख़्याल बिला वसातत वस्ल के ख़िलाफ़ है। लेकिन बिलाशक सूफ़ी दरवेश सफ़र की इब्तिदाई मंज़िलों के लिए बिलख़सूस ऐसे वसीले की ज़रूरत मानते हैं। बग़ैर रूहानी मुर्शिद के सालिक बन नहीं सकता। इस मुर्शिद को पीर या शेख़ भी कहते हैं। और ये भी ज़रूर है कि पीर ख़ुद सालिक रह चुका हो। और इस

राह के राज़ों से बख़ूबी वाक़िफ़ हो। दरवेशों के सारे ख़ानदान इस पर ज़ोर देते हैं।

इसलिए मुरीद अपने पीर की हिदायात पर अमल करता है। चिश्ती ख़ानदान के एक कलकत्ता के रहने वाले पेशवा का ये क़ौल है, पहली मंज़िल में मुरीद को चाहीए कि अपने पीर को प्यार करे और अपना सब कुछ उसी को समझे। उस की गुफ़तार रफ़्तार और इबादत अपने शेख़ की मानिंद हो। उस का उकल व शर्ब भी उस की मानिंद हो और उस पर बराबर अपना ध्यान जमाए रखे। शेख़ इस नव मुरीद को अपने ज़ेर-ए-नज़र रखे। उस की तर्बीयत करे उस की कामयाबी या नाकामयाबी का इक़रार सुने और उस की रूहानी तरक़्क़ी का अंदाज़ा लगाए।

# पीर की तासीर

पीर उसे ये तल्क़ीन करता है فناشو پیش از آں کہ فناشوی **"यानी अपने जज़्बात को मार कर और अपने दिल को साफ़ कर के अपनी सिफ्ली ज़ात को कुशता कर दे।** और अपने और मुरीद के रिश्ते का यूँ बयान करता है, **"तू तो लाश है और मैं उस लाश का ग़स्साल (यानी उस लाश को ग़ुस्ल देने वाला) हूँ। तू बाग़ है और मैं बाग़बाँ हूँ।** इस से मुराद तस्लीम मुतलक़ है, अगर कोई इरादा बाक़ी रहता है तो वो इस मुर्शिद का इरादा है। फ़िल-हक़ीक़त सारी दीनी रियाज़तें (मशक्क़तें) पहली मंज़िलों में सिखाई जाती हैं ना ख़ुदा से बिलाबास्ता वाक़िफ़ होने की ख़ातिर। ये फ़ना नी अल्लाह (فنی اللہ) होने की गोया तम्हीद (इब्तिदाई हिस्सा) है।

पीर दरमियानी वसीला है, कहते हैं कि उस ख़ानदान के बानी से सिलसिले-वार उस को ख़ास क़ुव्वतें मिलती हैं। उस के वसीले ईलाही क़ुदरत और इर्फ़ान हासिल होता है। तसव्वुफ़ में उस का दर्जा ये है कि सालिक सिर्फ उसी के वसीले नजात हासिल कर सकता है। लेकिन ये ख़तरा है कि वो अपने इस दर्जे का ग़लत इस्तिमाल करे। मुनश्शियात और कशिश मक़नातीसी के ज़रीये बहुतों ने इस का बुरा इस्तिमाल किया और बहुत तालिबान हक़ को फ़रेब दिया। लेकिन सारे इस्लामी ममालिक में लोगों को पीरों से बहुत अक़ीदत है और हज़ारहा मुसलमान पीरों को ख़ुदा की तरह पूजते हैं। इस का कुछ मज़ाइक़ा नहीं कि पीर ज़िंदा है या मर गया है। लोगों का उस पर वैसा ही अक़ीदा है। बल्कि जिस क़द्र मरने के बाद उस की इज़्ज़त होती है, इतनी ज़िंदगी में नहीं होती।

बंगाल के वहाबी इन पीर परस्तों के ख़िलाफ़ बहुत कुछ लिखते रहते हैं और ऐसे लोगों को नर पूजा या इन्सान की परस्तिश का इल्ज़ाम देते रहते हैं। लेकिन तसव्वुफ़ की किताबों में तो ख़ुदा के अवतार या मज़ीर अल्लाह महदूद और ग़ैर महदूद के दर्मियान पुल कहलाते हैं।

मौलाना रूमी भी इस ख़्याल से बे-बहरा ना थे :-

اند آدر سایہ آں عاقلے　　　کش نتاند بر اداز راہ ناقلے

بس تقریب جوید وسوئے الہ　　　سرپیچ از طاعت اوہیچ گا

چوں گرفتی پیر ہن تسلے م شو　　　دست او جز قبضہ اللہ نیست۔

(مثنوی دفتر اول حکایت ۱۰)۔

## <u>दरमयानी की ज़रूरत</u>

मज़्कूर बाला बयान से बख़ूबी ज़ाहिर है कि इन्सान की रूह ऐसे शख़्स के मिलने की कैसी आर्ज़ूमंद है जिसे कि इस वस्ल ईलाही (ख़ुदा से मिलाप) का राज़ मालूम हो। रूह हज़ारों तरीक़ों से ज़ाहिर कर रही है कि उस के और ख़ालिक़ के दर्मियान किसी दर्मियानी की ज़रूरत है। उसे इस अम्र का इल्म है कि कोई शए उनके दर्मियान हाइल है। अपने तकाज़ात और ख़्वाहिशात के ज़रीये रूह को मालूम है कि वो ज़्यादा भरपूर ज़िंदगी के लिए ख़ल्क़ हुई थी। इसलिए वो ऐसे शख़्स की तालिब है जिसे इस कामिल ज़िंदगी के कामिल तरीक़े का कामिल इल्म हो।

**<u>अपने रुहानी मुर्शिद के नमूने को देखो, क्या वो बेगुनाह है? क्या वो कामिल है?</u>** सूफ़ी अक़ीदे के मुताबिक़ इस दरमयानी पीर को एक ख़ास दर्जे तक कामिल होना चाहीए। वर्ना वो दूसरों को कमाल की राह की हिदायत नहीं कर सकता। बाअज़ पीरों की निस्बत इन लोगों का गुमान है कि वो सिलसिलेवार सज्जादा नशीन होते चले आए हैं। इसलिए उन की कमालियत यक़ीनी है। लेकिन क्या तहक़ीक़ात के सामने ये राय क़ायम रह सकती है? मसीही लोग अपने वाइज़ीन को कमाल का नमूना नहीं ठहराते। इसी वजह से बहुत लोग मसीही लोगों की कमज़ोरीयों पर निगाह डालते हैं और इसी वजह से आज दुनिया ने मसीही दीन को ऐसा कम समझा।

# कामिल मुर्शिद

मसीहीयों का कामिल मुर्शिद और रहनुमा मसीह है। वो अपनी ताअलीम अपनी सीरत अपने चलन में कामिल था और उस की ताअलीम और अमल दोनों यकसाँ थे। **दुनिया के सारे मज़ाहिब की मुक़द्दस किताबों का मुक़ाबला करने और इन्सानी तारीख़ के वाक़ियात से ये साबित है कि दुनिया में सिर्फ एक ही दफ़ाअ ऐसा कामिल शख़्स नमूदार हुआ और वो सय्यदना मसीह था। दुनिया के बड़े बड़े दीनी मुअल्लिमों और पेशवाओं में से सिर्फ एक ही ऐसा शख़्स नज़र आया जिस पर ईलाही सूरत का नक़्श ऐसा था कि कोई उसे पहचाने बग़ैर ना रह सकता था। यही वो वाहिद शख़्स है जिसके हम तालिब हैं कि ख़ुदा कैसा होता है।**

हम ये भी कहना चाहते हैं कि मसीह ने मूसा की तौरेत के जो गहरे बातिनी मअनी बताए इस से भी साबित है कि वो कामिल रुहानी मुर्शिद था। उस ने ये फ़रमाया, "ये ना समझो कि मैं तौरेत या नबियों की किताबों को मंसूख़ करने आया हूँ, मंसूख़ करने नहीं बल्कि पूरा करने आया हूँ।" (मत्ती 5 बाब 17 आयत) मसीह ने कभी ये नहीं कहा कि मेरा दीन मूसा के दीन को मंसूख़ कर देगा, बल्कि बरअक्स इस के उस ने बार-बार क़दीम मुक़द्दस किताबों और रिवायतों का ज़िक्र कर के और उन के बातिनी मअनी बता कर उन की तस्दीक़ की जिससे शख़्सी तजुर्बे पर तासीर हुई। हम उस के अक़्वाल में से एक को लेकर इस बयान की तशरीह करते हैं।

एक मौक़े पर शरीअत के एक आलिम शराअ ने मसीह से ये सवाल किया कि मैं क्या करूँ? ताकि हमेशा की ज़िंदगी का वारिस बनूँ? मसीह ने जवाब दिया कि तौरेत में क्या लिखा है? आलिम शराअ ने जवाब दिया कि "ख़ुदावंद अपने ख़ुदा से अपने सारे दिल और अपनी सारी जान और अपनी सारी ताक़त और सारी अक़्ल से मुहब्बत रख और अपने पड़ोसी से अपने बराबर मुहब्बत रख। मसीह ने कहा तूने ठीक जवाब दिया। यही कर तो तू जिएगा।" (लूक़ा 10 बाब 25 से 28 आयत)

**मसीह के सारे ख़्याल का हिस्र (जोर) इन्ही दो उसूलों पर है कि ख़ुदा को प्यार करें और इन्सान को प्यार करें।** मसीह की ताअलीम की बड़े ग़ौर से तफ़्तीश करें। तो यही पाएँगे हमारे आक़ा व मौला ने इस आलिम शराअ को जो जवाब दिया उस में शरीअत व रसूम को मसीह ने वैसी ही निगाह से देखा जिस निगाह से कि सूफ़ी शरीअत इस्लाम

को देखता है। मसीह ने उस की नई और बातिनी तशरीह की जो कभी नज़रअंदाज नहीं हो सकती।

**हम डाक्टर इमाद-उद्दीन के सूफ़ियों में से मसीही होने का ज़िक्र कर आए हैं। वो बयान करते हैं कि मैंने मत्ती की इंजील को पढ़ना शुरू किया और अभी सातवाँ बाब ख़त्म ना किया था कि उससे साबित हो गया कि मसीह कामिल रुहानी मुर्शिद और दुनिया का नजातदिहंदा था। क्योंकि इन्सान के दिल का और बातिनी तरीक़े की ज़रूरत का उस को इस क़द्र इल्म हासिल था।** उसी इंजील से हम मसीह के एक दो और अक़वाल का इक़्तिबास भी करते हैं।

ख़ून के बारे में मसीह ने फ़रमाया, **"तुम सुन चुके हो कि अगलों से कहा गया था, कि ख़ून ना कर, और जो कोई ख़ून करेगा वो अदालत की सज़ा के लायक़ होगा। लेकिन मैं तुम को बताता हूँ कि जो भी अपने भाई पर ग़ुस्सा करे उसे अदालत में जवाब देना होगा। इसी तरह जो अपने भाई को "अहमक़" कहे उसे यहूदी अदालत-ए-अलिया में जवाब देना होगा। और जो उस को "बेवुक़ूफ़ !" कहे वह जहन्नुम की आग में फैंके जाने के लाइक़ ठहरेगा।"** (मत्ती 5 बाब 21से 22आयत)

ज़िना के बारे में मसीह ने फ़रमाया, **"तुम सुन चुके हो कि कहा गया था कि ज़िना ना कर लेकिन मैं तुमसे ये कहता हूँ कि जिस किसी ने बुरी ख़्वाहिश से किसी औरत पर निगाह की वो अपने दिल में उस के साथ ज़िना कर चुका।"** (मत्ती 5 बाब 27 से 30 आयत)

इस ताअलीम के ऐन बाद, मसीह ने ऐसा बयान किया जो हर तारिक सूफ़ी को बहुत मर्ग़ूब होगा। मसीह ने ये फ़रमाया कि अगर तेरी आँख ठोकर खिलाए तो उसे निकाल डाल अगर हाथ ठोकर खिलाए तो उसे काट डाल मबादा वो तेरी बातिनी तरक़्क़ी में सद्द-ए-राह हों।

**तलाक़ के बारे में मसीह ने ये फ़रमाया, ये भी कहा गया था कि जो कोई अपनी बीवी को छोड़े उसे तलाक़ नामा लिख दे। लेकिन मैं तुमसे ये कहता हूँ कि जो कोई अपनी बीवी को हरामकारी के सिवा किसी और सबब से छोड़ दे वो उस से ज़िना करवाता है।**

**और जो कोई उस छोड़ी हुई से ब्याह करे वो ज़िना करता है (मत्ती 5 बाब 31 से 32 आयत)**

दीनी आमाल की ताअलीम देते वक़्त मसीह ने हमेशा ख़ुदा और उस की परस्तिश के रुहानी होने पर ज़ोर दिया। उसने कहा कि **"ख़ुदा रूह है और उसके परसितारों को चाहीए, कि रूह और रास्ती से उस की परस्तिश करें।"** (युहन्ना 4 बाब 24 आयत) इबादत के किसी फ़ेअल पर इस को लगा के देख लो वो अमल इबादत और ईमान के बातिनी और रुहानी फ़ेअल के सिवा और कुछ हो ही नहीं सकता।

## दुआ के मअनी

दुआ के बारे में मसीह ने ये फ़रमाया :-

**"जब तुम दुआ माँगो तो रियाकारों की मानिंद ना हो। क्योंकि वो इबादत ख़ानों में और बाज़ारों के मोड़ूँ (चौराहों) पर खड़े हो कर दुआ मांगनी पसंद करते हैं ताकि लोग उन्हें देखें। मैं तुमसे सच्च कहता हूँ कि वो अपना अज्र पा चुके।"** (मत्ती 6 बाब 5 आयत)

उस ने दिखावे की दीनदारी पर मलामत की। उस ने ये ताअलीम दी कि ऐसे लोगों को इसी दुनिया में उनका अज्र मिल गया। क्योंकि दूसरे लोग उन को दीनदार समझने लगे। हालाँकि हमारा बाप ख़ुदा ये चाहता है कि बैरूनी (बाहरी) ज़िंदगी की तरफ़ से अपने दरवाज़े बंद कर लें ताकि अपनी रूह के बातिन (अंदर) में हम ख़ुदा से क़ुर्बत (नज़दिकी) हासिल करें। जहां कहीं रूह में हक़ीक़ी रुहानी ज़िंदगी होगी वहां दीनदारी का दिखावा ना होगा।

मसीह ने ये भी ताअलीम दी कि हम ये तवक़्क़ो नहीं कर सकते कि ख़ुदा हमारी दुआ क़ुबूल करेगा और हमें माफ़ करेगा। अगर हम एक दूसरे के साथ दुश्मनी रखते हुए ख़ुदा से दुआ माँगेंगे बल्कि इस से कुछ ज़्यादा भी कहा। उस ने फ़रमाया कि, "अगर मस्जिद या हैकल में भी तुमको ये याद आए कि तुम्हारे और दूसरे के माबैन कुछ मुग़ाइरत (झगड़ा) और शिकायत है।

(तो) इस मौक़े के लिए उस ने ये फ़रमाया **"अगर तू कुर्बानगाह पर अपनी नज़र गुज़रानता हो और वहां तुझे याद आए कि मेरे भाई को मुझसे कुछ शिकायत है तो वहीं कुर्बानगाह के आगे अपनी नज़र छोड़ दे और जा कर पहले अपने भाई से मिलाप कर। तब आकर अपनी नज़र गुज़रान।"** (मत्ती 5 बाब 23 से 24 आयत)

# ख़ैरात

ख़ैरात के बारे में मसीह ने ये फ़रमाया :-

> **"ख़बरदार अपनी रास्तबाज़ी के काम आदमीयों के सामने दिखाने के लिए ना करो नहीं तो तुम्हारे बाप के पास जो आस्मान पर है तुम्हारे लिए कुछ अज्र नहीं है। पस जब तू ख़ैरात करे तो अपने आगे नर्सिंगा ना बजवा जैसा रियाकार इबादत ख़ानों और कूचों में करते हैं ताकि लोग उन की बड़ाई करें। मैं तुमसे सच्च कहता हूँ कि वो अपना अज्र पा चुके। बल्कि जब तू ख़ैरात करे, तो जो तेरा दहना हाथ करता है उसे बायां ना जाने ताकि तेरी ख़ैरात पोशीदा रहे। इस सूरत में तेरा बाप जो पोशीदगी में देखता है तुझे बदला देगा।** (मत्ती 6 बाब 1 से 4 आयत)

मसीह ने ऐसी ताअलीम बातिनी रोज़े के बारे में दी कि क्या किसी और मज़्हब में ऐसी ताअलीम पाई जाती है? उसने तौरेत की ताज़ीम की लेकिन साथ ही रूह के बातिनी तजुर्बात को छुवा और ये तक़ाज़ा किया कि जो कुछ हम करें उस में सदाक़त और हक़ीक़त हो ऐसी ताअलीम के बारे में मंसूख़ या मुअत्तल होने का इल्ज़ाम कैसा बेजा और नामुनासिब है।

**मसीह की ये ताअलीम ना सिर्फ ग़ैर मंसूख़ और कामिल है बल्कि जो शख़्स इस ताअलीम के लिए अपना सीना खौलता और इंजील की आला सदाक़त को क़ुबूल करता है उसे वो ख़ास रुहानी तर्जुमान मिल जाता है। जिसे रूहुल-क़ुद्दुस कहते हैं।** वो दिल को अपना मस्कन बना लेता है और उस दिल में नए ख़यालात और नई तहरीकें पैदा कर के तक़्दीस की राह में आगे बढ़ता जाता है।

# रूह-उल-क़ुद्दुस का अंदर बसना

हम ये ज़िक्र कर आए हैं कि रूह-उल-क़ुद्दुस ख़ुदा का सांस है जो ईमानदार को नई ज़िंदगी अता करता है। इंजील में ये ताअलीम साफ़ मज़्कूर है कि जो ज़िंदगी रूहुल-क़ुद्दुस के ज़रीये इन्सान को मिलती है उस के बग़ैर बातिनी तरीक़े में कोई तरक़्क़ी नहीं हो सकती। वो पोशीदा तौर पर इस ज़िंदगी को शुरू करता और क़ायम रखता है। जो मसीह नौ इन्सान के लिए लाया।

इस रूह के बारे में मसीह ने क्या फ़रमाया? वो दुनिया से रुख़स्त होने को था, जब उस ने अपने शागिर्दों से ये कहा :-

> **"अगर तुम मुझसे मुहब्बत रखते हो, तो मेरे हुक्मों पर अमल करोगे और मैं बाप से दरख़्वास्त करूँगा, तो वो तुम्हें दूसरा मददगार बख़्शेगा कि अबद (हमेशा) तक तुम्हारे साथ रहे यानी सच्चाई का रूह जिसे दुनिया हासिल नहीं कर सकती क्योंकि ना उसे देखती और ना जानती है। तुम उसे जानते हो क्योंकि वो तुम्हारे साथ रहता है और तुम्हारे अन्दर होगा।"** (युहन्ना 14 बाब 15 से 18 आयत)

फिर मसीह ने फ़रमाया :-

> **"मुझे तुमसे और भी बहुत सी बातें कहनी हैं। मगर अब तुम उन को बर्दाश्त नहीं कर सकते। लेकिन जब वो यानी सच्चाई का रूह आएगा तो तुमको तमाम सच्चाई की राह दिखाएगा। इसलिए कि वो अपनी तरफ़ से ना कहेगा लेकिन जो कुछ सुनेगा वही कहेगा और तुम्हें आइन्दा की ख़बर देगा और मेरा जलाल ज़ाहिर करेगा। इसलिए कि मुझ ही से हासिल कर के तुम्हें ख़बर देगा।"** (युहन्ना 16 बाब 12 से 18 आयत)

मसीह के इन अल्फ़ाज़ से साफ़ ज़ाहिर है कि वो ये नहीं चाहता था कि उस के शागिर्द अपने तईं तन्हा और मतरूक ख़्याल करें। इसलिए उसने ये बयान किया कि उन के अंदर ईलाही ज़िंदगी के नशव व नुमा (तरक्क़ी) और तक्मील के लिए और सारी क़ौमों में उस की इंजील के सुनाने में मदद करने

की ख़ातिर वो उनके साथ बराबर रहेगा ना बदनी सूरत में बल्कि रूहुल-क़ुद्दुस के ज़रीये से उन के दिलों में सुकूनत (बसा) करेगा। और उन के अफ़आल व अक़्वाल के ज़रीये ऐसे काम करेगा जो ज़ाहिरन नामुम्किन मालूम होते हैं।

मसीह के इन अल्फ़ाज़ पर भी ग़ौर करें तुमको सारी सच्चाई की राह दिखाएगा।.....तुम्हें आइन्दा की ख़बरें देगा।

मेरा जलाल ज़ाहिर करेगा।.....मुझ ही से हासिल कर के तुम्हें ख़बरें देगा। मसीह ने जो ताअलीम दी थी ईमानदारों के लिए उस की तशरीह करेगा। इसलिए हम यक़ीन से कह सकते हैं कि रूहुल-क़ुद्दुस कामिल रुहानी तर्जुमान है। वो मसीह के आमद की पैशनगोइयों और वाअदों और उस की ज़मीन पर की ज़िंदगी और ताअलीम को लेकर उन पर उस के मअनी खौलता है। वो ईलाही शारअ और तर्जुमान है।

रूह हमेशा मसीह का जलाल ज़ाहिर करता है। तौरेत ज़बूर और इंजील को लेकर उस के नक़्श-ए-क़दम का सुराग़ हमें देता है जिसे हम प्यार करते हैं। और हमारे रुहानी इदराक पर मसीह की रुयते को मुन्कशिफ़ (ज़ाहिर) करके बताता है कि वो आदमीयों का नजातदिहंदा है। उस माअमूर व कस्रत की ज़िंदगी के बारे में ख़ुदा के इरादे को वही हम पर रोशन करता है ताकि जो लोग ईमान के वसीले मसीह से पैवस्ता हो गए। वो उस का हज़ (लुत्फ़) उठा सकें। इस काम को उस ने सलीब पर सरअंजाम दिया। किसी शायर ने ये कहा था। जिसका तर्जुमा है :-

"रूह कलाम पर दम करता है, और हक़ीक़त को सामने खड़ा कर देता है। अहकाम और वाअदे तक़्दीस कनुंदा नूर बहम पहुंचाते हैं।"

इस ग़ैर मुरई (दिखाई ना देने वाले) रुहानी मुर्शिद की तासीर की तशरीह किस तरह से करें? सारी दुनिया में जो सिदक़ दिल से मसीह पर ईमान लाते हैं वो मुबारक तजुर्बे के ज़रीये से जानते हैं कि ख़ुदा का पाक रूह उन में आता, बस्ता और ज़बरदस्त तासीर करता है। रूह पर मसीह को मुन्कशिफ़ (ज़ाहिर) करने के काम में उस की लासानी हुज़ूरी मसीही दीन और दीगर अदयान में माबा-उल-इम्तियाज़ है।

क्या इस तशरीह से नाज़रीन को इस का मतलब समझने में मदद मिलेगी? इन्सान का दिल बेक़रार और दहशत-ज़दा है। उसे अंदरूनी जद्दो जहद का इल्म है। उस में मिलाप, मुहब्बत और इत्मीनान की तमन्ना है और

नूर व आज़ादगी की जानिब किसी क़द्र दरवाज़ा खोलता है। रूहुल-क़ुद्दुस हमेशा नज़्दीक है वो ताकता रहता है, पास ही खड़ा है। वाइज़ीन की मिन्नतों, किताब मुक़द्दस के पैग़ामों बल्कि रोज़मर्रा के वाक़ियात मिस्ल बीमारी व मौत वग़ैरह के गुनाह और आइन्दा अदालत का यक़ीन दिलाता है। और सदाक़त की ताज़ा किरनों के ज़रीये हौसला-अफ़ज़ाई करता है हत्ता कि मसीह का ईलाही हुस्न ग़ैर मुरई (अनदेखे) ख़ुदा की सूरत अपनी पूरी शान के साथ उस पर मुन्कशिफ़ (ज़ाहिर) हो और रूह मुहब्बत से उसे क़ुबूल कर ले। मसीह का रुहानी हुस्न उस मुहब्बत और ईमान के ज़रीये आश्कारा होता है जो रूहुल-क़ुद्दुस के ज़रीये हमारी रूहों में पैदा होते हैं।

गोया रूहुल-क़ुद्दुस फोटोग्राफी के कैमरा की टोपी उतार देता है और मसीह की सूरत पर रोशनी डालता है। और दिल की तैयार कर्दा क़ाबिल एहसास ज़मीन पर इस रोशनी की चमक के ज़रीये अक्स को पड़ने देता है। यही वो सूरत है जो हमारे दिलों पर मुनक़्क़श हो कर हमें ख़ुदा के दीदार और इर्फ़ान के क़ाबिल बना देती है और हमारे सारे आमाल में उस को मुनासिब जगह देती है।

> **"जो चीज़ें ना आँखों ने देखीं ना कानों ने सुनीं ना आदमी के दिल में आईं। वो सब ख़ुदा ने अपनी मुहब्बत रखने वालों के लिए तैयार कर दीं लेकिन हम पर ख़ुदा ने उन को रूह के वसीले से ज़ाहिर किया। क्योंकि रूह सारी बातें बल्कि ख़ुदा की तह (गहराई) की बातें भी दर्याफ़्त कर लेता है।"** (1 कुरंथियो 2 बाब 9 से 10 आयत)

ईमानदारों को अपना फ़र्ज़ भी बजा लाना है। वो रूहुल-क़ुद्दुस के काम पर तकिया (भरोसा) कर के निचला बैठ नहीं सकता और ना ये ख़्याल कर सकता है कि उस की रुहानी बातिनी ज़िंदगी के नशव व नुमा (तरक्क़ी) के लिए अब उसे कुछ करने की ज़रूरत नहीं रही। ईमानदार को कोशिश कर के ये जानना चाहीए कि इस सब का मतलब क्या है? और ख़ुदा के कलाम में इन्सान के साथ ख़ुदा के सुलूक, और गुनाह व नजात की तारीख़ का क्या बयान आया है। उसे इस अम्र की ज़रूरत है कि मसीह के क़दमों के पास बैठ के उस के अक़्वाल की शीरीं (मीठी) आवाज़ सुने और ध्यान रिफ़ाक़त और दुआ में बहुत वक़्त सर्फ़ (बिताया) करे। सिर्फ इसी तरीक़े से अपने दिल की ज़मीन को उस रूह की फ़स्ल के लिए तैयार कर सकता है जो मुहब्बत,

ख़ुशी, इत्मीनान, ख़ुश-मिज़ाज, मेहरबान, फ़य्याज़, वफ़ादार, हलीम व परहेज़गार है।

# छटा बाब

## मसीह और रुहानी इत्तिहाद

अहले तसव्वुफ़ हमारे आक़ा व मौला सय्यदना मसीह की बड़ी ताज़ीम करते हैं वो उसे ख़ालिस सूफ़ी और इमाम-उल-आशीन यानी सय्याहों का पेशवा समझते हैं। उन के नज़्दीक मसीह की ज़िंदगी और ताअलीम तसव्वुफ़ के अक़ीदे का तक़रीबन कमाल है। उस की बेवतनी, इफ़्लास (ग़रीबी) और दुनिया से बे-तअल्लुक़ी का उन पर बहुत असर है और उस के इस क़ौल का जो इस्लामी रंग में रंगा हुआ है चर्चा करते नहीं थकते।

**"लोमड़ियों के लिए मांदें और हवा के परिंदों के लिए बसेरे है पर इब्न-ए-आदम को सर धरने की जगह नहीं।"** (मत्ती 8 बाब 20 आयत)

तसव्वुफ़ की किताबों में मसीह के बारे में असली या नक़्ली इंजीलों से बहुत क़िस्से पाए जाते हैं। ख़ासकर इमाम ग़ज़ाली और जलाल उद्दीन रूमी की तस्नीफ़ात में।

दुनिया की बे-इत्मीनान सीरत के बारे में इमाम ग़ज़ाली ने ये फ़रमाया :-

सय्यदना मसीह ने ये कहा, दुनिया को प्यार करने वाला शख़्स उस आदमी की मानिंद है, जिसने आब-ए-शोर पिया हो, जितना वो उसे पीता है उतना ही ज़्यादा वो प्यासा होता है हत्ता कि वो बिला (बगैर) प्यास बुझे, हलाक हो जाता है।" (अज़ केमिया-ए-सआदत)

फिर जनाब मसीह के एक दूसरे क़ौल को उन्होंने इक़्तिबास किया :-

"जान लो कि सारे गुनाह की जड़ दुनिया की मुहब्बत है और शायद साअत (कुछ वक़्त) भर की मुहब्बत उन को जो उस की पैरवी करते हैं दुनिया को बिल्कुल खो दें।" (एहया-उल-उलूम)

और फिर ये हुब दुनिया (यानी दुनिया की मुहब्बत) और हुब आक़िबत (यानी आखिरत की मुहब्बत) एक ही दिल में समा नहीं सकते। जैसे आब व आतिश (पानी और आग) एक ही ज़र्फ़ (जगह) में इकट्ठे नहीं रह सकते। (एहया-उल-उलूम)

दुनिया के फ़ानी होने के बारे में ये बयान है कि जब लोगों ने आकर सय्यदना मसीह के लिए घर तामीर करने का इरादा किया तो वो उन्हें साहिल समुंद्र पर ले गया और उन बेक़रार लहरों को दिखाया और कहा कि इन लहरों पर घर बनाव। इमाम ग़ज़ाली ने इस क़ौल का यूं ज़िक्र किया :-

सय्यदना मसीह ने फ़रमाया, तुम में से कौन समुंद्र की लहरों पर घर तामीर कर सकता है? दुनिया का यही हाल है। इसलिए उसे पायदार मकान ना समझो। (एहया-उल-उलूम)

लेकिन सूफ़ियों और दरवेशों का मसीह को अपने जैसा फ़क़ीर समझना उनकी ग़लती है। ये तो सच्च है कि वो अक्सर पहाड़ों पर जा कर रात भर दुआ मांगा करता था। ध्यान और ख़ुदा की क़ुर्बत (नज़दिकी) में वक़्त काटता था। लेकिन हुजूम को छोड़कर वहां जाना किसी ख़ुदग़रज़ी की ख़्वाहिश से ना था। बल्कि वो आराम व इत्मीनान की ख़ातिर वहां जाता था। ताकि वो अपने बाप की क़ुर्बत (नज़दिकी) में रह कर उन भारी फ़राइज़ के अदा करने के लिए तैयार हो। जो उन लोगों के दर्मियान उस को पेश थे जो बे चौपान (बगैर चरवाहो वाली) भेड़ों की मानिंद थे। ये भी सच्च है कि वो हफ़्तों तक ब्याबान में रहा करता जहां उस पाक रूह को शैतानी वस्वसों और आज़माईशों से जंग करनी पड़ी वो भूका रहा और उसे अंदरूनी जद्दो जहद करनी पड़ी। लेकिन ये वो फ़क़ीराना फ़ेअल ना था जिसे सूफ़ी फ़क़ीराना रियाज़त (बदनी मशक्क़त) समझते हैं। वो वहां शैतान पर फ़त्ह हासिल करने गया ताकि वो उन मर्दों और औरतों को ज़्यादा फ़ायदा पहुंचा सके जो बदी

का शिकार हो चुके थे। ये तर्क-ए-दुनिया और ख़ुद इंकारी तो थी। क्योंकि आज़माईश के क़िस्से से हम ये सीखते हैं कि रुहानी सल्तनत और दुनिया की सल्तनत के दर्मियान इंतिख़्राब वहां किया गया।

## सय्यदना मसीह दरवेश ना थे।

यहां ये ज़िक्र करना भी मुनासिब है कि सूफ़ी तरीक़ा रियाज़त का हिस्सा इस अम्र पर था कि इन्सान के बातिन में बदी का अंसर था। जिस पर फ़त्ह नफ़्सकुशी (नफ़्स को मारे जाने) के तरीक़ों ही से पा सकते थे। सूफ़ियों के नज़्दीक ऐसी नफ़्सकुशी लाज़िमी है और सालिक के लिए पहली मंज़िलों में ये अहम मंज़िल है। जब सूरत-ए-हाल ये हो, तो फिर मसीह के लिए ऐसी रियाज़तों पर अमल करने की क्या ज़रूरत थी? **हर मुसलमान को ये मालूम है कि वो गुनाह से बिल्कुल मुबर्रा था।** सूफ़ियों के रुहानी मुर्शिदों के बरअक्स उसे तौबा और नफ़्सकुशी की ज़रूरत ना थी। क्योंकि उस में कोई ऐसे शैय ना थी जिसे कुशता (ख़त्म) करने की उसे ज़रूरत हो जिससे कि उस की रूह ख़ुदा के साथ इत्तिहाद के क़ाबिल बन जाये। उसे ये इत्तिहाद ज़िंदगी-भर हासिल था।

## सय्यदना मसीह का दम

मसीह में ऐसी ईलाही ज़िंदगी ने उस को ऐसी क़ुदरत और तासीर अता की ना सिर्फ आदमीयों के बदनों को शिफ़ा देने में बल्कि उन की (ज़िन्दगी) बदल डालने में भी। ये तब्दीलीयां फ़ी ज़माना (आज के ज़माने में) भी वक़ूअ में आती रहती हैं। ख़ुदा की हम्द हो ! वो अब तक इसलिए वक़ूअ में आ रही हैं, क्योंकि रूहुल-क़ुद्दुस क़ुव्वत बख़्श रहा है जो हर ईमानदार और कुल कलीसिया में काम कर रहा है। चुनान्चे मसुनवी रूमी में मसीह की ऐसी तासीर का यूं ज़िक्र आया है,

صومعہ عیسیٰ است خوان اہل دل
ہان دھان اے مبتلا ایں درمہل
جمع گشتندے زہر اطراف خلق
ازضر ےروشل و لنگ و اہل ولق
بردر آں صومعہ عیسیٰ صباح
تا بدم ایشاں رہا نند از جناح
آب و گل چو از دم عیسیٰ چرید
بال و پر بکشا دو مرغے شد پرید

صد ہزاراں طب جالینوس بود
پیش عیسیٰ و دمش افسوس بوُد
حالیا موقوف فکر و رائے او
زندہ از نفخ مسیحا آسائے او

एक दूसरे मुक़ाम में मौलाना रूमी ने ये तहरीर किया जिसका ये तर्जुमा है,

बहार आए फिर पत्थर पर सब्जी ना उगेगी। यह खजां में भी बंजर है और आदमी का दिल यह पत्थर है। जब तक फ़ज़्ल शामिल हाल ना हो और इस पत्थर को चूर करके इस बंज़र ज़मीन को सब्ज़ ज़ार ना बनाए, और जब दम **मसीहा** अज़ सर-ए-नो इस दिल पर फूंका जाएगा तो यह ज़िंदा होगा---इसमें सांस आएगा और यह कलियाँने लगे।

मौलाना रूमी ने शिफ़ा बख़्श दम मसीहा से क्या समझा? उस के अल्फ़ाज़ से ज़ाहिर है कि तिब्बी तबक़े में ये दम एजाज़ था जिससे मुर्दा ज़िंदा हो जाते थे। बल्कि कुछ इस से भी बढ़कर था। अख़्लाक़ी तबक़े में भी इस दम को ये ताक़त हासिल है कि दिल को ज़िंदा कर के उसे पाक करे। ये दम क्या है? ये जनाब मसीह में वही ईलाही हयात (ज़िन्दगी) और रूह है। अहले इस्लाम मसीह को रूह अल्लाह (अल्लाह की रूह) कहा करते हैं, इसलिए वो ज़रूर ये भी मान लेंगे कि उसे दिलों को तब्दील करने की क़ुव्वत हासिल है। **अगर किसी ने शरीअत, तरीक़त और हक़ीक़त के सही मअनी समझे तो वो सय्यदना मसीह था।**

हम आक़ा व मौला सय्यदना मसीह के ज़रा ज़्यादा क़रीब जाएं। बहुतों ने उसे ठीक तौर से नहीं समझा। हमने ये ज़िक्र किया था कि वो सूफ़ी नमूने का फ़क़ीर ना था और हम उस के कमाल के सामने सर-निगूँ (सर झुकाए) होते। हम कुछ इस से आगे क़दम बढ़ा कर ये ज़ाहिर करेंगे। **उस का ये दावा था कि वो ख़ुदा और इन्सान के दर्मियान रुहानी इत्तिहाद कराने आया था।** उस की सारी ताअलीम में इस का सुराग़ पाया जाता है। बहुत कुछ तो उसने तम्सीलों और तशबिहीयों (मिसाल और इशारतन बयान) में बयान किया और बहुत कुछ साफ़ व सलीस अल्फ़ाज़ में जिसे हर अहले बसारत देख सकता है।

अपना ज़िक्र करते हुए उसने ये फ़रमाया, **"दुनिया का नूर मैं हूँ, ज़िंदगी और क़ियामत मैं हूँ, अच्छा गडरिया (चरवाहा) मैं हूँ। अच्छा गडरिया (चरवाहा) भेड़ों के लिए अपनी जान देता है। मसीह ने ये भी फ़रमाया कि बाप के पास पहुंचने के लिए राह भी वही था, यानी असली तरीक़त।"**

इन दाअ्वों में से हर एक दाअ्वे की तशरीह से उस दीन के हक़ीक़ी बातिनी मअनी समझने में हमको मदद मिलेगी जिसकी ताअलीम मसीह ने दी। लेकिन ख़ासकर हम उस के दो अक़्वाल पर ग़ौर करें :-

(1) मसीह ने फ़रमाया, **"ज़िंदगी की रोटी मैं हूँ।"** क्या इस से ज़्यादा रुहानी तसव्वुर हो सकता है? अहले फ़हम के लिए इस में रुहानी ग़िज़ा है। मसीह ने कहा **"जो रोटी आस्मान से उतरी वो मैं हूँ और फिर ये मेरा गोश्त फ़िल-हक़ीक़त खाने की चीज़ और मेरा ख़ून फ़िल-हक़ीक़त पीने की चीज़ है।"** इस का क़ुदरती नतीजा ये है। जो मेरा गोश्त खाता और मेरा ख़ून पीता है वो मुझमें क़ायम रहता है और मैं उस में। इस का नतीजा रुहानी तब्दीली है। जो कोई मेरा गोश्त खाता और मेरा ख़ून पीता है, हमेशा की ज़िंदगी उस की है। (युहन्ना 6 बाब 51 से 54 तक)

अहले तसव्वुफ़ कहा करते हैं कि हक़ीक़त को पाने के लिए तश्बियह में से गुज़र जाना चाहीए। मसीह हमें क्या समझाना चाहता था? उस वक़्त सामईन (सुनने वाले) में मिले जुले लोग थे। कुछ यहूदी थे और कुछ मसीह के शागिर्द। खाने का मतलब उन्होंने दीनी ताअलीम समझा था। लेकिन इस से कुछ ज़्यादा मअनी इस में थे। अगरचे उस वक़्त मसीह के शागिर्दों ने इन अल्फ़ाज़ के पूरे मअनी ना समझे लेकिन जब रूहुल-क़ुद्दुस आन कर उन के दिलों में सुकूनत करने लगा तो उन्होंने इन अल्फ़ाज़ के ठीक मअनी समझ लिए।

हम जानते हैं कि रोटी ग़िज़ा है, ये क़ुव्वत देती है। ये सिर्फ एक शर्त पर दुनिया को ज़िंदगी अता करती है। हम उसे खा कर हज़म करके अपने बदन का जुज़ (हिस्सा) बना लें वर्ना जो क़ुव्वत इस से हासिल होनी चाहीए वो कभी हासिल ना होगी। यही हाल मसीह का है, जो ज़िंदगी की रोटी आस्मान से नाज़िल शूदा है। वो हमारी रूहों की ग़िज़ा है और हमें ऐसी ताक़त बख़्शता है जिसके ज़रीये हमारा लाज़वाल इत्तिहाद ख़ुदा बाप के साथ हो जाये। ऐसी ही ग़िज़ा के ज़रीये रूहों को ताक़त और ज़िंदगी मिल सकती

है, शर्त ये ही कि हम उस में शरीक हों। हम ईमान से उस को क़ुबूल कर लें और उस को अपना जुज़ (हिस्सा) बना लें।

मसीही हक़ीक़ी ग़िज़ा था क्योंकि वो मुहब्बत के ख़ुदा का अवतार था। हमारे दिलों की तश्फ़ सिर्फ़ मुहब्बत ही से हो सकती है। उस ने आन कर अपनी जान हमारे लिए दी। और हमारे दिल उस महबूब को अपने अंदर ले लेते हैं और उस की हुज़ूरी के ज़रीये उन को ग़िज़ा और ख़ुशी हासिल होती है अपने बदन और ख़ून से मुहब्बत के ज़रीये जो क़ुर्बानी उस ने दी, यानी हमारी ख़ातिर ऐन अपनी जान दी ताकि हम उसे अपनी जान का महबूब जान कर ज़्यादा से ज़्यादा उस से दिल बस्ता (दिल से क़रीब) होते जाएं।

(2) मसीह ने फ़रमाया, **"अंगूर की हक़ीक़ी बेल मैं हूँ, तुम डालियां हो।"** इस रुहानी सरियह इत्तिहाद के बारे में ये एक और मसीह का क़ौल है। हमारे ख़ुदावंद के हर दीनदार पैरौ (मानने वालों) के लिए ये गिराँ-बहा (यानी बहुत कीमती) क़ौल है। इस में शराकत और कामिल इत्तिहाद और उस रुहानी तरक़्क़ी के वसाइल का ज़िक्र है। जो दीन की तारीख़ में लासानी है मसीह के अल्फ़ाज़ ये हैं :-

**"तुम मुझमें क़ायम रहो और मैं तुम में। जिस तरह डाली अगर अंगूर की बेल में क़ायम ना रहे तो अपने आपसे फल नहीं ला सकती इसी तरह अगर तुम भी मुझमें क़ायम ना रहो तो फल नहीं ला सकते। मैं अंगूर की बेल हूँ तुम डालियां हो। जो मुझमें क़ायम रहता है और मैं उस में। वही बहुत फल लाता है। क्योंकि मुझसे जुदा हो कर तुम कुछ नहीं कर सकते। अगर कोई मुझमें क़ायम ना रहे तो वो डाली की तरह फेंक दिया जाता और सूख जाता है।" (युहन्ना 15 बाब 4 से 6 आयत)**

मसीह ने अपने शागिर्दों से इस अम्र की तशरीह कि वो ईमानदार के अंदर सिर्फ उसी शर्त पर सुकूनत कर सकता है कि वो फल लाए। यानी मसीह की अंदरूनी ज़िंदगी में वो तरक़्क़ी करे। और आदमीयों के दर्मियान तासीर करे। ये बातिनी तजुर्बे के लिए तक़ाज़ा है। और इन्सान की यही आला

ज़िंदगी है। रूह में मसीह की मुहब्बत का मुस्तक़िल वक़ूफ़ उस की क़ुव्वत है। इसी वाहिद तरीक़े से फल पैदा हो सकता है।

अगर ये इत्तिहाद मौजूद है, तो फल भी यक़ीनी है। जैसे अंगूर के दरख़्त में पत्तों और फलों का होना। डाली को इस कोशिश का कुछ वक़ूफ़ नहीं होता क्योंकि तने के साथ उस का ज़िंदा ताल्लुक़ है। जो डाली उस तने में क़ायम रहती है वो किसी शैय की मुहताज नहीं क्योंकि जो कुछ उसे दरकार है वो तने में मौजूद है। और "उस में उलूहियत की सारी भर पूरी से हम सबने पाया फ़ज़्ल पर फ़ज़्ल।"

मसीह के इस सारे क़ौल का ज़ोर फल लाने पर है। मसीह की ये आरज़ू थी कि लोग महज़ नाम के शागिर्द ना हों। या महज़ ज़ाहिरी सूरत शागिर्दी की रखने वाले ना हों। वो ये चाहता था कि उस के शागिर्दों की ज़िंदगी एक ज़बरदस्त ताक़त बन जाये ताकि उस की सूरत को वो मुन्कशिफ़ (ज़ाहिर) कर सकें। जैसा कि ख़ुद उस ने ग़ैर मुरई (ना दिखने वाले) ख़ुदा की सूरत को मुन्कशिफ़ (ज़ाहिर) किया था। उस का मंशा ये था कि उस के शागिर्द ऐसा वसीला (जरिया) बन जाएं। जिनके ज़रीये वो ख़ुद फल पैदा करे। वो उन्हें ईलाही सदाक़त के रस और ईलाही मुहब्बत की हक़ीक़त से भर देता है। अब उनका ये काम है कि वो इस ज़मीन को अंगूरों में मुंतक़िल कर दें। दीगर अल्फ़ाज़ में ख़ुदा ने ईमानदारों के सपुर्द ये काम किया है कि वो नो इन्सान पर ऐसा असर करें जिससे कि वो मसीह में ज़िंदगी को क़ुबूल कर लें। जहां तक उस ज़िंदगी ने उन के दिलों पर असर किया होगा वहां तक वो उस को क़ुबूल कर लेंगे।

इस से साफ़ ज़ाहिर है कि मुस्लिह दीन (यानी इस्लाह करने वाला दीन) महज़ कोई ज़ाहिर मसअला या किसी नुस्ख़े या रसूम की पाबंदी नहीं बल्कि ये हक़ीक़त है कि मसीह ज़िंदा है और वो अपने तईं लोगों के सामने पेश करता है ताकि वो उन में सुकूनत करे और यूं वो हमारा मिलाप ख़ुदा से करा देता है इस का उस को पूरा यक़ीन है। उस ने ये साफ़ कहा,

**"मुझसे जुदा हो कर तुम कुछ नहीं कर सकते।"**

हमारी तमन्ना ये है कि हमारे सब मुसलमान भाई जिन्होंने इस ज़िंदगी इर्फ़ान व मुहब्बत ईलाही की इस क़द्र अर्से तक तलाश की है, वो अपनी आँखें मसीह की तरफ़ फेरें उस के तरीक़े में चलें। उस की ज़िंदगी से क़ुव्वत हासिल करें और उस के तालिब हों कि वो उन के अंदर सुकूनत करे। इस के लिए इंजील की मुतवातिर तिलावत और उस पर गौर व ध्यान करने की

ज़रूरत है। इस के लिए दुआ और रूहुल-क़ुद्दुस की मदद दरकार है ताकि इन सारी सदाक़तों का मुतालआ रुहानी आँख से करें जैसा कि मौलाना रुम ने फ़रमाया :-

ये मेय उस दुनिया की है, ज़रूफ़ इस दुनिया के हैं। ज़रूफ़ दिखाई देते हैं, लेकिन मेय पोशीदा है ये जिस्मानी आँख से पोशीदा है। लेकिन रुहानी आँख पर मुन्कशिफ़ (ज़ाहिर) और हुवैदा है। (मसुनवी दफ़्तर पंजुम क़िस्सा 8)

# सातवाँ बाब

## मसीही तहसील

शायद नाज़रीन के दिल में ये जानने की ख़्वाहिश पैदा हुई होगी कि आया रुहानी इत्तिहाद का ये मसीही मसअला फ़िल-हक़ीक़त हमारे जैसे एक इन्सान में अमली जामा में साबित हुआ या मसीह के ये अक़्वाल बेमाअनी थे।

बहुत से ऐसे आला और शरीफ़ अश्ख़ास (लोग) गुज़रे हैं जो दुनियावी मुआमला फहमी और उमूर मुल्की में शहर आफ़ाक़ थे उन्होंने भी जनाबे मसीह की ज़िंदगी से ज़िंदगी हासिल की। लेकिन मिसाल के लिए शायद एक शख़्स के रुहानी तजुर्बे का ज़िक्र करना काफ़ी होगा। बशर्ते के तवज्जो के साथ हम इस पर ग़ौर करें। हमारा मुद्दा पौलुस रसूल की ज़िंदगी से है जिसका ख़ाका उस के ख़ुतूत में खीचा नज़र आता है जो इस ने एशिया कोचक की मुख़्तलिफ़ मसीही जमाअतों को लिखे और जो बाइबल का एक जुज़ (हिस्सा) हैं। बहुत बातों में पौलुस इमाम ग़ज़ाली की मानिंद था। दोनों इल्म ईलाही के माहिर और शरई ज़िंदगी के दिल-दादा थे। और दोनों इस नतीजे तक पहुंचे कि हक़ीक़ी दीन शरीअत के बग़ैर किसी दीगर वसीले से इन्सान की बातिनी ज़िंदगी में नशव व नुमा (तरक्क़ी) पाता है।

पौलुस जिसका पहला नाम साऊल था। अपनी क़ौमीयत और इब्राहीमी मिल्लत और मूसवी दीन पर बड़ा फ़ख़्र करता था। चुनान्चे उस ने अपनी

निस्बत ये लिखा, "आठवें दिन मेरा खतना हुआ। इस्राईल की क़ौम और बीनियामीन के क़बीले का हूँ। इब्रानियों का इब्रानी, शरीअत के एतबार से बेऐब था।" (फिलिप्पियों 3 बाब 4 से 6 आयत)

फिर उस ने ये बयान किया, **"मैं अपने यहूदी तरीक़ में अपनी क़ौम के अक्सर हम उम्रों से बढ़ता जाता था और अपने बुज़ुर्गों की रिवायतों में निहायत सर-गर्म था।"** (ग़लतीयों 5 बाब 14 आयत) बचपन से पौलुस को ये ताअलीम व तर्बीयत मिली थी कि तौरेत व ज़बूर को माने, और यहूदी कलीसिया के रेत रसूम पर चले। चुनान्चे वो इन सब पर बातफ़्सील अमल करता रहा और उसे ये ख़्याल था कि ऐसी शरई और कलीसियाई पाबंदी के ज़रीये से ही वो मुत्तक़ी और परहेज़गार बन सकता था।

पौलुस ने ये भी ख़्याल किया कि वो बेहतर यहूदी और ख़ुदा का बेहतर ख़ादिम हो सकता है। बशर्ते के वो जनाबे मसीह के शागिर्दों को सताए और दुख दे। लेकिन जिन मुक़द्दसों ने संगसाज़ी ज़द व कोब क़ैद और जाम-ए-शहादत तक से ख़ौफ़ ना खाया उनकी ज़िंदगीयों की तासीर अपना रंग दिखाए बग़ैर ना रह सकती थी। इन मसीहीयों के ईमान ने इस को वरता हैरत में डाल दिया। उस को एक नई क़िस्म के मज़्हब से पाला पड़ा जिसने इन्सानियत का एक नया नमूना पैदा कर दिया था। इन मुक़द्दसों की ग़ैर मामूली रुहानी ज़िंदगी और सरगर्मी देखकर वो हैरान शश्दर रह गया। बिरादरी और ग़रीबों और हर जमाअत के मुहताजों के साथ उनकी बेग़र्ज़ मुहब्बत और हम्दर्दी देखकर वो दम-ब-ख़ुद रह गया। वो इस एहसास से रिहाई ना पा सकता था कि ये मसीही जो सताए जाते थे हक़ीक़ी ज़िंदगी और क़ुव्वत के राज़ से वाक़िफ़ थे। उस का उसे कुछ इल्म ना था। और जिस दीन का वो ऐसे जोश व ख़ुरोश से आख़िरी दम तक पैरौ (मानने वाला) था उस से ये नेअमत हासिल ना हुई थी। वो अपने से ये सवाल करने लगा कि क्या ईमान, उम्मीद, मुहब्बत की ये मसीही ताअलीम जो उस मस्लूब, जी उठे और आसमां पर सऊद करने वाले मसीह पर तकिया (भरोसा) करने पर मबनी है सच्च ही तो नहीं?

अपनी ज़मीर से वो कुछ अर्से तक ये सवाल पूछता रहा लेकिन फिर भी मसीहीयों के सताने से बाज़ ना आया। लेकिन एक रोज़ दोपहर के वक़्त जब दमिशक़ की तरफ़ वो जा रहा था ना-गहाँ आस्मान से उस के इर्द-गिर्द ऐसा नूर चमका कि ये ज़मीन पर गिर पड़ा और उस ने किसी को अपने से ये कहते सुना:-

"ऐ शाऊल ऐ शाऊल तू मुझे क्यों सताता है?
उस ने पूछा ऐ ख़ुदावंद तू कौन है?
उस ने जवाब दिया कि मैं यसूअ हूँ जिसे तू सताता है।
मगर उठ शहर में जा और जो तुझे करना चाहीए वो तुझसे कहा जाएगा। (आमाल अल-रसूल 9 बाब 3 से 7), जो आदमी उस के हमराह थे वो ख़ामोश खड़े रह गए। क्योंकि आवाज़ तो सुनते थे मगर किसी को देखते ना थे।

इस मुतशर्रीअ (शरीअत का पाबंद) साऊल से मुबश्शिर इंजील (इन्जील की खुशखबरी सुनाने वाला) पौलुस बन गया। मसीही दीन की तारीख़ में रूहानी तजुर्बे का ये अजीब क़िस्सा है। इस क़िस्से की सदाक़त उस शख़्स की पूरी तब्दीली से ज़ाहिर है। जो एक दफ़ाअ फ़ख़्र करने वाला फ़रीसी था वो हलीम और ख़ाकसार मसीह का पैरौ (मानने वाला) हो गया वो सताने वाला उस सताई हुई ताअलीम का मुअल्लिम जय्यद बन गया। उस की ताअलीम इंतिहाई यहूदीयत नहीं बल्कि वसीअ मसीही आलमगीर ताअलीम है।

पौलुस ने अपनी ज़िंदगी की इस अजीब तब्दीली का बार-बार ज़िक्र किया। इस ने उस ज़माने से तश्बीह दी जब तारीक (अँधेरी) दुनिया से नूर इस को पैदा हो गया। उस के ये अल्फ़ाज़ हैं ख़ुदा ही है जिसने ये फ़रमाया कि **"तारीकी में से नूर चमके और वही हमारे दिलों में चमकाता कि ख़ुदा के जलाल की पहचान का नूर यसूअ मसीह के चेहरे से जलवागर हो।"** (2 कुरंथियो 4 बाब 6 आयत)

पौलुस को ये इल्म था कि उस ने रुयते देखी और मस्लूब और जी उठे मसीह को उस ने देखा। जिसने अपने अल्फ़ाज़ से इस नूर में जो दोपहर के आफ़्ताब से भी ज़्यादा नूरानी था, उस पर ये ज़ाहिर कर दिया कि वो ज़िंदा था और मसीहीयों के सताने से वो ख़ुद मसीह को सता रहा था।

**<u>शरीअत से मसीह की तरफ़ क्यों फिरें?</u>** शायद कोई ये पूछे कि पौलुस मूसा की शरीअत से हट कर जनाब-ए-मसीह के ज़रीये आई हुई ख़ुदा के फ़ज़्ल की इंजील की तरफ़ क्यों हुआ? जो वो शरीअत की रास्तबाज़ी के लिहाज़ से बेऐब था तो वो कामिल ठहरा। बिलाशक यहूदी नुक़्ता ख़्याल से वो कामिल था। लेकिन पौलुस ने ये मालूम किया कि **<u>शरीअत में ये ताक़त ना थी कि उसे ख़ुदा की नज़र में कामिल बनाए।</u>** उस को ये मालूम हो गया कि **<u>"सबने गुनाह किया और ख़ुदा के जलाल से महरूम हैं।"</u>** और कि जब तक बातिनी इन्सानियत किसी तरीक़े से अज़ सर-ए-नौ पैदा ना हो और जो

सिर्फ ख़ुदा ही कर सकता था उस का नफ़्स या गुनाह आलूदा फ़ित्रत उस की रूह को हलाक कर देगी। पौलूस ने ये दलील पेश की इन्सान में एक गुनाह आलूदा फ़ित्रत थी जो उसे आदम से हासिल हुई जिसे कोई शरीअत बदल ना सकती थी। लेकिन उस ने ये भी सीख लिया कि मसीह पर ईमान लाने के ज़रीये ही से वो अज़ सर-ए-नौ (नए सिरे से) पैदा हो सकता था।

**और दीन के इस नए तसव्वुर ने उन बड़ी सदाक़तों का इर्फ़ान पोलुस को अता किया जिनके तालिब सूफ़ी हैं।** चुनान्चे जब वो ये कहते हैं कि "فنا شو پیش ازآں کہ فنا شوی" और अल्फ़ाज़ "ہجر" तस्लीम, ख़ुद इंकारी, और वस्ल वग़ैरह इस्तिमाल करते हैं। इसी तरह पौलुस ने रूहुल-क़ुद्दुस से ताअलीम पा कर इन सारे ख़यालात की उम्दा तशरीह की।

पौलुस जब मसीह को नजात का तरीक़ा मान चुका तो उस की ज़िंदगी का तक्या कलाम ही मसीह हो गया। चुनान्चे उस के बयान से ये पाया जाता है :-

> **"मैं मसीह के साथ मस्लूब हुआ हूँ। और अब मैं ज़िंदा ना रहा बल्कि मसीह मुझमें ज़िंदा है। और मैं जो अब जिस्म में ज़िंदगी गुज़ारता हूँ। तो ख़ुदा के बेटे पर ईमान लाने से गुज़ारता हूँ जिसने मुझसे मुहब्बत रखी और अपने आपको मेरे लिए मौत के हवाले कर दिया।" (ग़लतीयों 2:2)**

मसीह की ज़िंदगी को पौलुस ने जो अपनी ज़िंदगी समझा तो ये रूहुल-क़ुद्दुस की ताअलीम से था। क्योंकि मसीह ने जब अपने तईं (अपने आपको) **"अंगूर की बेल"** या **"आस्मानी रोटी"** कहा, तो उस ने इसी रुहानी इत्तिहाद का बयान किया था।

पौलुस ने जब उस को अपनी ज़िंदगी का तक्या कलाम ठहराया तो उस ने महज़ मसीह की पैरवी करना मुराद ना लिया। जो कोई मसीह को जानना चाहता है, ये उस का रोज़ाना हक़ ही नहीं बल्कि पौलुस को अपनी ज़िंदगी के लिए एक नया मर्कज़ मिल गया। ख़ुदी के मर्कज़ से उस की रूह हट गई और उस नई ज़िंदगी में क़ायम हो गई जिसका मर्कज़ ख़ुदा था। पुराने **"मैं"** की जगह नया **"मैं"** आ गया। इसलिए पौलुस ये ना कह सकता

था कि **"मेरे लिए ज़िंदगी मैं ख़ुद हूँ"** बल्कि **"मेरे लिए ज़िंदगी मसीह है।"** अब गुनाह आलूद नफ़्स उस ज़िंदगी पर हुकूमत ना कर सकता था। क्योंकि मसीह उस के अंदर दाख़िल हो गया था। जिससे उस की रूह को सेहत व ज़िंदगी मिलती और क़ुद्दुसियत (पाकिज़गी) में तरक़्क़ी होती थी। इस का नतीजा अजीब था कि उम्मीद, मुहब्बत, आज़ादगी और रूह-उल-क़ुद्दुस में ख़ुशी ने उस की रूह को भर दिया। पौलुस की वो पुरानी शिकायत **"इस मौत के बदन से मुझे कौन छुड़ाएगा।"** (रोमीयों 7:24) अब इत्मीनान का ये इज़्हार उस से सुनते हैं, **"मुझे ख़ुदा की मुहब्बत से जो यसूअ मसीह हमारे ख़ुदावंद में है, कौन जुदा करेगा?"**

पौलुस ने अपनी सारी तहरीरों में ये अम्र बख़ूबी ज़ाहिर कर दिया कि मसीह के सच्चे ईमानदार के लिए ये अमली जामा पहन लेता है। ख़ुद पौलुस के अपने अल्फ़ाज़ में इस की तशरीह पाई जाती है। **"मैं मसीह के साथ मस्लूब हो गया हूँ।"** पौलुस का इल्हाम, उस की ज़िंदगी की सांस, उस का खाना उस ईलाही नजातदिहंदा की शराकत में था जो कलवरी की सलीब पर मस्लूब हुआ। और मुर्दों में से फिर जी उठा। पौलुस के नज़्दीक इस के ये मअनी थे, कि मसीह के दुख उस के अपने दुख हो गए गोया उस की ज़िंदगी के हर तबक़े में यही अमल हो रहा था।

पौलुस की ये ताअलीम थी कि मसीह पर ईमान लाने के ज़रीये ईमानदार मसीह में पैवंद हो जाता था और मसीह के साथ रुहानी और अख़्लाक़ी शराकत उस को हासिल हो जाती थी। और वो मसीह की सलीब और मुर्दों में से जी उठने में उस के साथ शरीक हो जाता था। जैसे लफ़्ज़ी तौर से मसीह हमारे गुनाहों की ख़ातिर मुआ (मरा) और ख़ुदा के सामने हमें रास्तबाज़ ठहराने के लिए जी उठा वैसे ही हर ईमानदार को उस की सलीब के वसीले ये तौफ़ीक़ मिलती है कि हर रोज़ गुनाह के लिए मरे और उस की क़ियामत की क़ुदरत में रास्तबाज़ी के लिए जी उठे। पस कामिल ईमान से ये मुराद है कि आदमी अपने दिल और इरादे को पूरे तौर से ख़ुदावंद मसीह के आगे सौंप दे। और दानिस्ता सोच समझ कर उस के साथ यगानगत (क़राबत) का एहसास हासिल करे।

इस के ये मअनी हैं कि मसीह को क़ुबूल करने से पेशतर उस के क़वा (ताक़त) फ़साद की तरफ़ ऊद करते जाते हैं। लेकिन नई ज़िंदगी को हासिल करने के ज़रीये नई ताक़त उस को मिल जाती है। और इस नई ख़ल्क़त के अमल को सर-अंजाम तक पहुंचाती है। दूसरे अल्फ़ाज़ में इस का यूं ज़िक्र कर सकते हैं। जब इन्सान अपनी मर्ज़ी को ख़ुदा के सपुर्द कर देता है। तो ख़ुदा

की मर्ज़ी उस की सारी शख़्सियत में अमल करने लग जाती है। जब हम इस ईलाही मर्ज़ को काम करने देते हैं तो हमारी सारी ज़िंदगी बदल जाती है।

तो भी बाअज़ गुनाह आलूद फ़ित्रत बाक़ी रहती है, ये मस्लूब कहलाती है। पौलुस ने ये लिखा, **"हम जानते हैं कि हमारी इन्सानियत उस के साथ इसलिए सलीब दी गई कि गुनाह का बदन बेकार हो जाये ता कि हम आगे गो गुनाह की गुलामी में ना रहें।"** (रोमीयों 6:6) उस ने इस को ऐसे दरख़्त से तश्बीह दी है जिसकी छाल चारों तरफ़ से छील ली गई हो और जो दरख़्त फ़िल-हक़ीक़त मुर्दा है। शहवत और जज़्बात को कुशता करने की अब भी ज़रूरत है। लेकिन अब ऐसे ईमानदार के लिए ये मुम्किन हो गया जो ये जानता है कि मसीह में बसने (हमारा गुनाह की निस्बत मरना) और मसीह के उस के अंदर बसने के क्या मअनी हैं। और मसीह के ज़रीये जो ग़ालिब आने वाली ज़िंदगी हासिल होती है इस से वाक़िफ़ है हमें ये यक़ीन है। कि चूँकि मसीह ने सलीब पर ऐसी फ़त्ह हासिल की जिसे हमारे अंदर गुनाह की निस्बत मौत कहते हैं। पौलुस ने ये कहा, "तुम अपने तईं गुनाह की निस्बत मुर्दा और अपने ख़ुदावंद यसूअ मसीह में ख़ुदा की निस्बत ज़िंदा समझो।"

**"तुम अपने तईं ख़ुदा के लिए मख़्सूस करो, गोया कि तुम मौत से ज़िंदगी में लाए गए हो। रास्तबाज़ी के लिए अपने आज़ा (बदन के हिस्सों) को ख़ुदा के लिए मख़्सूस करो।"**

कलीसिया की मसीही जमाअत की तरफ़ जो उस ने ख़त लिखा उस ने इस रुहानी इत्तिहाद का मज़ीद बयान किया और बताया कि मसीही शख़्स इस रुहानी ज़िंदगी में ख़ुद मसीह के साथ आस्मान में जा बैठता है। जैसे मसीह आस्मान पर चढ़ गया वैसे ही ईमानदार के वसीले चढ़ जाना चाहीए। पौलुस के ये अल्फ़ाज़ हैं, **"पस जब तुम मसीह के साथ जिलाए गए तो आलम-ए-बाला की चीज़ों की तलाश में रहो, जहां मसीह मौजूद है और ख़ुदा की दहनी तरफ़ बैठा है। आलम-ए-बाला की चीज़ों के ख़्याल में रहो। ना ज़मीन पर की चीज़ों के क्योंकि तुम मर गए और तुम्हारी ज़िंदगी मसीह के साथ ख़ुदा में छिपी हुई है। जब मसीह जो हमारी ज़िंदगी है ज़ाहिर किया जाएगा तो तुम भी उस के साथ जलाल में ज़ाहिर किए जाओगे।"** (कुलस्सियों 4:1-3)

क्या इस क़िस्म के तजुर्बे की दीनदार अहले इस्लाम को आरज़ू नहीं? ये बड़ा राज़ है। ख़ुद पौलुस ने इस को राज़ कहा, तो भी ये रुहानी तजुर्बा

और ताक़त है ये ईमान के ज़रीये हासिल होता है। चुनान्चे पौलुस ने कहा, **"मैं जो अब जिस्म में ज़िंदगी गुज़ारता हूँ तो ख़ुदा के बेटे पर ईमान लाने से गुज़रानता हूँ जिसने मुझसे मुहब्बत रखी और अपने आपको मेरे लिए मौत के हवाले कर दिया।"** (ग़लतीयों 2:20)

ये क़ाबिल लिहाज़ है कि अपने सारे ख़तों में पौलुस ने नजात और मसीह के साथ रुहानी इत्तिहाद के बारे में लिखा उस ने ख़ुदा की इस अजीब मुहब्बत, रहमत और फ़ज़्ल के लिए उस की तम्जीद की क्योंकि उस ने ऐसे वसाइल और तरीक़े बहम पहुंचाए जिनके ज़रीए इन्सान ख़ुदा के साथ मिलाप हासिल कर सके।

# मसीह कलीसिया की ज़िंदगी

लेकिन पौलुस ने इस ख़्याल की और भी तौज़ीह (वजाहत) कर दी कि मसीह जो हमारी ज़िंदगी का मर्कज़ है वो ना सिर्फ अफ़राद की ज़िंदगी का मर्कज़ है बल्कि सारी कलीसिया का जो मसीह पर ईमान लाने वालों की जमाअत है। इस का सुराग़ भी मसीह के अल्फ़ाज़ में मिलता है, चुनान्चे उस ने ये फ़रमाया था :-

**"मैं अंगूर का दरख़्त हूँ तुम डालियां हो। और जहां दो या तीन मेरे नाम पर इकट्ठे हैं वहां मैं उन के बीच में हूँ।"** (मत्ती 18 बाब 20 आयत)

मसीह ने ईमानदारों की एक बिरादरी क़ायम कर दी जिनका इत्तिहाद महज़ अंजुमनी या जमाअती ना था जैसा कि आजकल पाया जाता है। ऐसे इत्तिहाद तो ख़ुदग़रज़ी पर मबनी हैं। लेकिन ये इत्तिहाद ख़ानदानी इत्तिहाद था। जिसका सर ख़ुद मसीह था।

कलीमन्ट ने जो पौलुस से थोड़ी देर बाद ज़िंदा था इस मसीही इत्तिहाद को ऐसे हलक़ों की ज़ंजीर से तश्बीह दी जो कशिश मक़नातीसी से पैवस्ता थे। लेकिन हमारी दिलचस्पी पौलुस की तश्बीह से है।

उस ने ज़िक्र किया कि मसीह और उस की कलीसिया का ताल्लुक़ इमारत की बुनियाद और ख़ुद इमारत से मुशाबेह है, **"तुम ख़ुदा की इमारत हो, बुनियाद मसीह है। इस बुनियाद पर ये इमारत तामीर की जाती है कि गोया ये एक वाहिद पत्थर है।"** (1 कुरंथियो 3 बाब 9 से 11 आयत)

उस ने एक और मशहूर तश्बीह दी कि मसीह और उस के लोगों का इत्तिहाद ऐसा ही है जैसा कि इन्सानी बदन का आज़ा (हिस्सों) से था। और

ये तश्बीह बिल्कुल मसीह के तसव्वुर के मुताबिक़ थी कि उस की कलीसिया एक ज़िंदा रुहानी बदन था। मसीह इस बदन या कलीसिया का सर था। इस हैसियत से वो यगानगत और इम्तियाज़ का मर्कज़ था। जैसे अंगूर के दरख़्त की ऊंची से ऊँची डाली जड़ की ज़िंदगी से ज़िंदा रहती है। वैसे ही बदन में हर उज़ू (हिस्सों) का ज़िंदा ताल्लुक़ सर से होता है। वैसे ही मसीह और उस की कलीसिया का इत्तिहाद था। उस नजातदिहंदा की ज़िंदगी बख़्श हयात उस से बह कर उस के बदन (यानी कलीसिया) के हर उज़ू में सरायत करती है। (1 कुरंथियो 12 बाब 12 से 13 आयत और 27 आयत, इफ़िसियों 4 बाब 15 से 16 आयत)

पौलुस ने अक़्द (निकाह) से भी इस को तश्बीह (मिसाल) दी जिससे कि ब्याह का तसव्वुर और भी ज़्यादा आला हो जाता है। शौहरों को नसीहत करते वक़्त उस ने ये मिसाल दी। उस की ये ताअलीम थी कि **"जैसे मसीह बदन का सर था, और इसलिए कलीसिया पर इख़्तियार रखता था। वैसे ही शौहर जोरू का सर है। जैसे बदन सर के ताबे होता है वैसे ही जोरू (बीबी) शौहरों के ताबे हों। लेकिन ये सब कुछ मुहब्बत से हो। क्योंकि जैसे मसीह ने कलीसिया को प्यार किया और उस की ख़ातिर जान दी वैसे ही शौहर अपनी जोरूओं (बीबी) को प्यार करें जैसे अपने बदन को प्यार करते हैं। आदमी अपने बदन से अदावत (नफरत) नहीं रखता। बल्कि बरअक्स इस के उसे खिलाता और उस की परवरिश करता है। जैसे कि मसीह कलीसिया को ख़ुराक देता और इस की परवरिश करता है। क्योंकि हम तो उस के बदन के आज़ा (हिस्सें) हैं।"** (इफ़िसियों 5 बाब 21 से 32 आयत)

लेकिन हम फिर ये बताना चाहते हैं कि इस इत्तिहाद के ज़रीये ईमानदार बेकार नहीं हो जाता। इमारत की मिसाल देते वक़्त पौलुस ने अफ़राद की ज़िम्मेदारी पर भी ज़ोर दिया और कि हर एक को पाकीज़ा बनना चाहीए। क्योंकि ईमानदार रूहुल-क़ुद्दुस की हैकल (घर) है और रूहुल-क़ुद्दुस उन के दिलों के अंदर सुकूनत करता है। और बदन की तश्बीह जिसमें हर ईमानदार एक उज़ू (हिस्सा) है। पौलुस ने हर फ़र्द उज़ू (यानी हर फर्द को जो मसीह की कलीसिया के बदन का हिस्सा है) के काम पर ज़ोर दिया जिसके वसीले कि सारा बदन मुहब्बत में बढ़ता और तामीर होता जाता है। (इफ़िसियों 4 बाब 16 आयत) बदन में यगानगत है। मुख़्तलिफ़ आज़ा (हिस्सों) को एक दूसरे से एक मुश्तर्क ग़रज़ है। ताकि एक दूसरे की इज़्ज़त ख़ुशी, ग़म, हम्दर्दी में रूहुल-क़ुद्दुस के ज़रीये शराकत हासिल हो (1 कुरंथियो 12 बाब 25 से 28 आयत) जिस सदाक़त की तशरीह पौलुस

ने की ख़्वाह वो कैसी ही गहरी और सेरिया हो उस ने उस को हमेशा अमली जामे में ज़ाहिर किया। बाअज़ फ़राइज़ को अदा करना था। रुहानी ज़िंदगी दीनी सर गर्मी के पहलू ब पहलू होनी चाहीए। ईमानदार को मसीह में ज़िंदगी का जो तजुर्बा हासिल होता है। उस के ये मअनी नहीं कि वो दुआ से या ख़ुदा के घर से या अपने हम-जिंसों (इंसानों) की मदद से ग़ाफ़िल रहे। पौलुस ने कहा लगातार दुआ माँगो। दूसरों की फ़िक्र और हम्दर्दी जो उस में पाई जाती है वो हर एक के लिए नमूना है। चुनान्चे इस उल्फ़त का ज़िक्र उस के अपने अल्फ़ाज़ में ये है, **"किसी की कमज़ोरी से मैं कमज़ोर नहीं होता, किसी के ठोकर खाने से मेरा दिल नहीं दुखता।"** (2 कुरंथियो 11 बाब 19 आयत)

क्या ख़ुदा और इन्सान के दर्मियान इस से आला इत्तिहाद मुम्किन है जो कि दो इन्सानों में पैदा होता है? जिस इत्तिहाद के ज़रीये एक शख़्सियत दूसरी शख़्सियत से वाबस्ता हो जाती है और एक मुश्तर्क मर्कज़ यानी मसीह ईलाही नजातदिहंदा और दरमयानी के वसीले ज़िंदगी ज़िंदगी से वस्ल हासिल कर लेती है।

पौलुस के दिल में जो ये ख़्याल था उस ने उस को ये तसव्वुर दिया कि ख़ल्क़त की कुल अश्या का इत्तिहाद मसीह में तक्मील पाएगा। पौलुस पर ये मुन्कशिफ़ (ज़ाहिर) हुआ था कि **"मसीह में, मसीह के वसीले और मसीह की ख़ातिर सारी चीज़ें मख़्लूक़ (पैदा) हुईं। वो सब चीज़ों से पहले था वो सब चीज़ों की इल्लत (वजह), सब का मब्दा और सबकी इल्लत-ए-ग़ाई (आला मक़्सद) था। और सारी चीज़ें उस में क़ायम रहती हैं।"** (कुलस्सियों 1 बाब 17 आयत) अल-ग़र्ज़ मसीह वो किलीद (चाबी) है जो ख़ल्क़त के सारे राज़ों को खोल देती है। उस में और उस के वसीले से ख़ल्क़त सालिम कामिल बन जाती है।

मिलाप का तरीक़ा इंजील में ये बताया गया है, **"ख़ुदा ने मसीह में हो कर अपने साथ दुनिया का मेल मिलाप कर लिया।"** (2 कुरंथियो 5 बाब 19 आयत)

**"क्योंकि बाप को ये पसंद आया कि सारी मामूरी उसी में सुकूनत करे और उस के ख़ून के सबब जो सलीब पर बहा सुलह कर के सब चीज़ों का उसी के वसीले से अपने साथ मेल करे, ख़्वाह वो ज़मीन की हों ख़्वाह आस्मान की।"** (कुलस्सियों 1 बाब 19 से 20 आयत)

किसी अंग्रेज़ी शायर ने कहा था, जिसका तर्जुमा ये है :-

**"मैं कहता हूँ कि मसीह में ख़ुदा को तस्लीम करना अक़्ल को मक़्बूल है।"**

ज़मीन और उस के बाहर की सारी मुश्किलात इस से हल हो जाती हैं और तुझे तरक़्क़ी देकर दाना बनाता है।

अब इन सदाक़तों के साथ हमारा क्या ताल्लुक़ है? क्या हम दीन में लकीर के फ़क़ीर बने रहें जिस दीन का गला क़दीम रिवायतों ने घोंट डाला है? क्या दीन हमारे लिए महज़ एक रस्म रह गया है, और चंद जुमलों और दुआओं में मुक़य्यद हो गया है? जिनको हम सज़ा के ख़ौफ़ से इस्तिमाल करते हैं? क्या हमारी जमाअत दीनी उमूर में हमको ज़िंदा समझती है? हालाँकि हम दिल में जानते हैं कि ख़ुदा के नज़्दीक हम ज़िंदा नहीं? या ये जानते हैं कि दीन हमारी रूह और ख़ुदा के साथ हमारी शराकत का तजुर्बा है? **क्योंकि हमें एक क़ाबिल दरमयानी मिल गया है यानी बेगुनाह नजातदिहंदा मसीह** और हम रूह में उस के साथ सुकूनत रखने से ख़ुश होते हैं।